कुरुक्षेत्र

अगस्त 1989,

मूल्य 2 रुपये,

पंचायती राज प्रणाली

संविधान (64वां संशोधन) विधेयक, 1989

– एक सिंहावलोकन

लोकतन्त्र का सत्व

लोकतंत्र का सारतत्व है चुनाव। पंचायती राज संस्थाओं के चुनाव दुर्भाग्यपूर्ण रूप से अनियमित और अनिश्चित रहे हैं। संविधान में अधिदेशात्मक प्रावधान अलंघनीय है। राज्य नियमों में वैधानिक प्रावधान की उतनी पवित्रता नहीं है। इस विधेयक के द्वारा हम पंचायती राज संस्थाओं के चुनाव को नियमित और नियतकाल में करवाने के लिए संविधान में व्यवस्था करने का प्रस्ताव करते हैं।

हम इस विधेयक के माध्यम से दूसरी बीमारी, जिसने देश के अनेक भागों में पंचायती राज को प्रभावित कर रखा है, को भी खत्म करना चाहते हैं। वह है-कभी न समाप्त होने वाली निलंबन और भंग किए जाने की बीमारी। समुचित अवधि के भीतर लोकतांत्रिक चुनावों द्वारा पंचायतों के पुनर्गठन के लिए अकाट्य प्रावधान के अभाव में निलंबित पंचायतें वर्षों तक निलंबित रही हैं और भंग पंचायतें एक दशक या अधिक समय तक भंग रही हैं। इस विषय पर वर्तमान नगर कानून में राज्य विधान मंडलों ने कार्यपालिका को – पंचायती राज संस्थाओं को इतना अधिकार दे रखा है कि ये संस्थाएं जनता की इच्छा का प्रतिनिधित्व करने वाले मंच के रूप में अपने आप को खड़ा रखने की अपनी क्षमता खो बैठी हैं। उनका अस्तित्व राज्य सरकारों की सनक पर कम, जनता के आदेश पर ज्यादा निर्भर करता है।

हमारा विधेयक राज्य सरकारों को उन आधारों और परिस्थितियों, जिसमें पंचायती राज संस्थाओं को निलंबित या भंग किया जा सकता है, को निर्धारित करने की छूट देता है। हम राज्य विधान मंडलों से उम्मीद रखते हैं कि वे उन अधिकारों को स्पष्ट करें जिन पर राज्यपाल पंचायत को निलंबित या भंग कर सके। वह संविधान के अनुसार राज्य सरकार की मदद और परामर्श पर कार्य करने वाले राज्यपाल का मामला है। हमारा संबंध यह सुनिश्चित करने से है कि एक भंग पंचायत एक उचित समय की अवधि में पुनर्गठित हो जाए।

हमारा विधेयक संविधान के द्वारा इस बात को अनिवार्य बनायेगा कि सभी पंचायतें जो अपनी अधिकारिक अवधि से पहले भंग हों उन्हें भंग होने के छः माह के अंदर व्यस्क मताधिकार पर आधारित लोकतांत्रिक चुनावों द्वारा शेष अवधि के लिए पुनर्गठित किया जाए। पंचायतें कार्यकारिणी के मनमाने अधिकार प्रयोग का खिलौना बनकर अब और अधिक नहीं रहेंगी। जनता ही, कुछ ही महीनों में पुनर्गठित पंचायत की रूपरेखा निर्धारित करेगी।

जारी आवरण पृष्ठ 3 पर

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास विभाग का प्रमुख मासिक

'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक लेख, कहानी, एकांकी, कविता, संस्मरण, हास्य-व्यंग्य चित्र आदि भेजिए। अस्वीकृत रचनाओं की वापसी के लिए टिकट लगा व पता लिखा लिफाफा साथ आना आवश्यक है।

'कुरुक्षेत्र' की एजेन्सी लेने, ग्राहक बनने, पता बदलने या अंक न मिलने की शिकायत, व्यापार व्यवस्थापक, प्रकाशन विभाग, पटियाला, नई दिल्ली-110001 से कीजिए।

वर्ष-34, अंक 10, श्रावण-भाद्रपद, शक-1911

कार्यवाहक सम्पादक : गुरचरण लाल लूथरा
उप सम्पादक : राकेश शर्मा

उत्पादन अधिकारी : राम स्वरूप मुंजाल
आवरण पृष्ठों की साज सज्जा : आर.के. टंडन
चित्र : फोटो प्रभाग से साभार

एक प्रति : 2.00 रु.
वार्षिक चंदा : 20 रु.

विषय सूची

पंचायती राज के महत्व की पुनर्स्थापना 3
डा. गिरिजा प्रसाद दूबे

पंचायती राज विधेयक : संभावनाएं 7
डा. एस.एम. शाह

पंचायती राज संस्थाओं की पुनर्स्थापना : 'लोक' की ओर अग्रसर भारतीय लोकतंत्र 11
नन्द लाल

क्या इसके परिणाम आशाओं के अनुरूप होंगे 14
गिरीश के. मिश्र

ग्राम पंचायतों का स्वरूप कैसा? 17
गिरीश माहेश्वरी

पंचायती राज व्यवस्था के लिए संविधान संशोधन विधेयक 20
राकेश कुमार

एक अभिनव प्रयोग है — पंचायती राज व्यवस्था 23
दिलीप कुमार

वादी प्रतिवादी (कहानी) 25
दुर्गेश

पहले बुनियादी सुधार लागू हों 27
भरत डोगरा

पंचायती राज व्यवस्था 30
ज्ञानेन्द्र पाण्डेय

पंचायती राज एवं चौंसठवां संविधान संशोधन विधेयक 1989 32
अरूण

ग्रामीणों के सुखद भविष्य की आशा पंचायती राज 36
बृज भूषण वाजपेयी

लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की दिशा में ऐतिहासिक क्रांतिकारी कदम : एक निष्पक्ष विश्लेषण 38
लादू सिंह चौहान

विकास गीत (कविता) 40
सतपाल

पंचायती राज और ग्रामीण विकास 41
डी.एस. नगरकोटी एवं डा. कैलाश जोशी

जीवन चक्र (कविता) 45
राखी कुमार

प्रकाशित लेखों में अभिव्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं तथा यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी यही हो।

सम्पादकीय पत्र व्यवहार : सम्पादक, कुरुक्षेत्र (हिन्दी), कृषि मंत्रालय, ग्रामीण विकास विभाग, 467, कृषि भवन, नई दिल्ली के पते पर करें।

दूरभाष 384888

प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी ने संसद के पिछले बजट अधिवेशन के दौरान 15 मई, 1989 को लोक सभा में संविधान (64वां संशोधन) विधेयक, 1989 पेश कर एक नई क्रान्ति का सूत्रपात किया गया है। संसद के मौजूदा अधिवेशन में इस विधेयक पर चर्चा होगी और आशा है कि विधेयक इसी सत्र में संसद द्वारा पारित कर दिया जाएगा। 'कुरुक्षेत्र' ने भी इस विधेयक पर राष्ट्रीय परिचर्चा हेतु कुछ ऐसे महानुभावों के विचार आमंत्रित किये हैं जिन्हें ग्रामीण वातावरण, वहां की अर्थव्यवस्था और वहां की समस्याओं के बारे में अच्छी जानकारी है। इन लेखकों ने विधेयक के संदर्भ में विभिन्न मुद्दों पर अपने निष्पक्ष विचार प्रकट किये हैं जिनसे पाठकों को विधेयक के बारे में विस्तृत जानकारी मिल सकेगी। यह उल्लेखनीय है कि इन लेखों में लेखकों के अपने विचारों को प्रकाशित किया गया है, यह आवश्यक नहीं है कि सरकारी दृष्टिकोण भी यही हो।

सम्पादक

पंचायती राज के महत्व की पुनर्स्थापना

डा. गिरिजा प्रसाद दूबे

जनतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण एवं स्वशासन की कल्पना को मूर्त रूप, पंचायत राज व्यवस्था द्वारा ही दिया जा सकता है। ग्रामीण क्षेत्रों में स्वायत्त सरकार का ढांचा ग्राम पंचायतों से प्रारम्भ होता है। भारत की पंचायत प्रणाली इतनी प्राचीन मानी जाती है, जितना कि भारत का इतिहास। ग्रामीण भारत पहले से ही 'स्वनिर्मित' और 'स्वशासित' ग्रामीण समुदाय में रहता आया है। इस चिरकालीन प्रणाली का समादर मध्यकालीन शासकों ने भी किया। इस संस्था को सबसे अधिक क्षति अंग्रेज शासकों ने पहुंचायी। परन्तु अंग्रेजों के शासनकाल में ही भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने इसे पुनर्जीवित करने का प्रयास किया।

गांधीजी का स्वराज और स्वतंत्रता आन्दोलन मात्र एक राजनीतिक आन्दोलन ही नहीं था। इसने महिलाओं, बच्चों, किसानों, औद्योगिक मजदूरों, समाज के कमजोर वर्गों और दूसरे लोगों को भी प्रभावित किया। इसी कारण यह आन्दोलन एक सशक्त आन्दोलन प्रमाणित हो सका। गांधीजी 'ग्रामीण स्वराज' की बात कहते थे। उनकी दृष्टि में गांव को अपने में पूर्ण, आत्मनिर्भर और स्वशासित इकाई होना चाहिये। गांव की सुरक्षा, विकास और नियंत्रण किसी बाहरी अभिकरण द्वारा नहीं, खुद ग्रामीणों द्वारा ही अपने आप किया जाना चाहिए। यही कारण था कि गांधीजी ने स्वतंत्रता आन्दोलन के साथ ही सार्थक आयोजन द्वारा ग्रामीणों की सामाजिक तथा आर्थिक दशा सुधारने तथा पंचायत को पुनर्जीवित करने की वकालत की। इसी कारण भारत सरकार के तत्वावधान में 'एक्ट 1935' के अनुसार अप्रैल 1937 के चुनाव के बाद ग्यारह प्रान्तों के संयुक्त मंत्रिमण्डल ने शासन के साथ सभी प्रान्तों में जनसेवकों की सहायता से ग्रामीण विकास करने के लिए फण्ड की व्यवस्था करने एवं पंचायतों के सन्दर्भ में विशेष रुचि प्रदर्शित की थी।

ये जो कदम उस समय उठाये गये उनका प्रभाव अधिक समय तक न रह सका। इसका कारण स्पष्ट था कि अंग्रेज शासक ग्रामीण विकास में रुचि नहीं रखते थे। जब 1939 में द्वितीय विश्व युद्ध प्रारम्भ हुआ तो भारतीय जनता को विश्वास में लिए बिना भारत सरकार उसमें सम्मिलित हो गयी। परिणामस्वरूप जनप्रिय सरकार ने खण्ड-खण्ड में त्याग पत्र दे दिया। इसके राष्ट्रीय नेता शीघ्र 'स्वराज' प्राप्त करने में लग गये और उसे 15 अगस्त, 1947 को प्राप्त भी कर लिया। स्वतंत्र भारत के लिये संविधान निर्माण करने वाली प्रतिनिधि सभा ने राज्य-नीति के दो निर्देशक सिद्धान्तों को स्वीकार किया। अनुच्छेद (38) के अनुसार राज्य (अ) ऐसी व्यवस्था करने का भरसक प्रयास करेगा जिससे राष्ट्रीय जीवन की सभी संस्थाओं में लोगों को सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय मिल सके। साथ ही प्राचीन स्वशासन व्यवस्था को पुनर्जीवित करने के लिए अनुच्छेद (40) ने राज्यों के लिए यह आवश्यक कर दिया कि (ब) राज्य ग्राम पंचायतों को पुनर्जीवित करने के लिए कदम उठाये और उन्हें इस प्रकार शक्ति सम्पन्न करने की व्यवस्था करे जिससे कि वे 'स्वशासन की एक इकाई, के रूप में कार्य कर सकें।

बहुत दिनों से विदेशी शासन में शासित और प्रताड़ित होने से थकी-हारी भारतीय जनता अनेक प्रकार के अन्धविश्वास, कुरीतियों, अशिक्षा और गरीबी का शिकार हो चुकी थी। इन सारी वियोग्यताओं और बुराइयों की जड़ वह अपने भाग्य को मानती थी। इसीलिए स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद सबसे महत्वपूर्ण कार्य यह था कि उसमें यह विश्वास पैदा किया जाये कि मनुष्य अपना विकास स्वयं कर सकता है, भाग्य उसमें कहीं आड़े नहीं आता है। भारत सरकार ने 2 अक्तूबर, 1952 को महात्मा गांधी के जन्म दिन पर सामुदायिक विकास कार्यक्रम (सी.डी.पी.) का शुभारम्भ किया। इसका उद्देश्य गांव के अर्ध विकसित लोगों में अपना विकास स्वयं करने के लिये विश्वास पैदा करना तथा गांव का सर्वांगीण विकास जनसहयोग के माध्यम से करना था। सरकार इसमें केवल कुछ आर्थिक और तकनीकी सहायता ही कर सकती थी। अधिक अन्न उपजाओ समिति (ग्रो मोर फूड कमेटी) 1952, ने इसमें राष्ट्रीय प्रसार सेवा (नेशनल

एक्सटेंशन सर्विस) को जोड़ने की संस्तुति की। 2 अक्तूबर, 1953 को इसे जोड़ भी लिया गया। खण्ड-स्तर पर विकास और नियोजन को चलाने तथा इसे गति प्रदान करने के लिए खण्ड विकास अधिकारी को जिम्मेवार ठहराया गया। इसके इस कार्य में सहयोग देने के लिए विभिन्न तकनीकी अधिकारियों और ग्राम्य स्तरीय कार्यकर्ताओं की भी व्यवस्था की गयी।

इस योजना के प्रारंभ काल में ही अनेक कमियों (जैसे योजना के कार्यान्वयन में रुचि की कमी, अनावश्यक व्यय तथा आवश्यकता से अधिक स्टाफ आदि) के चलते जनवरी, 1957 में बलवन्त राय मेहता की अध्यक्षता में इसकी व्यापक जांच और सुझाव के लिए एक समिति बनायी गयी। समिति के विचार में जनता का सहयोग प्राप्त करने के लिये योजना में आवश्यक प्रयास नहीं किया गया जिससे लोग इसे अपनी योजना नहीं मान पाये और अपेक्षित सहयोग भी नहीं प्राप्त हो सका। इससे व्यय तो आवश्यकता से अधिक बढ़ गया परन्तु अच्छे परिणाम सामने नहीं आये। इन दुष्परिणामों से बचने के लिए समिति ने उपर्युक्त अनुच्छेद (40) के प्रकाश में प्रशासन के क्षेत्र के अन्तर्गत जनतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया को लागू करने की संस्तुति की। इस अनुशंसा द्वारा जिले का सम्पूर्ण प्रशासन तीन स्तरों— ग्राम पंचायत, पंचायत समिति और ज़िला परिषद में विभाजित किया जा सकता है। इस अनुशंसा को लोकसभा में विचार हेतु प्रस्तुत किया गया और पंचायती राज के नाम से इसे स्वीकृति प्राप्त हो गयी। राज्यों को इसे अपनी सुविधाओं और स्थितियों के अनुरूप लागू करने के लिए निर्देश जारी किये गये।

देश में राजस्थान एवं आन्ध्र प्रदेश ये दो ऐसे राज्य थे, जिन्होंने पंचायत राज को सबसे पहले लागू किया। इसे लागू करने की स्वतंत्रता के कारण कुछ राज्यों ने एक, कुछ ने दो और कुछ ने तीन स्तरीय पंचायती राज व्यवस्था को लागू किया। पंचायती राज व्यवस्था सर्वप्रथम दो अक्तूबर, 1959 को पं. जवाहरलाल नेहरू द्वारा राजस्थान राज्य में प्रारम्भ की गयी। उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, बिहार, पं. बंगाल, आन्ध्र प्रदेश, गुजरात, हिमाचल प्रदेश, कर्नाटक, अरुणाचल प्रदेश, पंजाब और चण्डीगढ़ में पंचायती राज की तीन स्तरीय व्यवस्था लागू है। शेष राज्यों या केन्द्र शासित क्षेत्रों में दो या एक स्तरीय व्यवस्था लागू है।

पंचायती राज की संरचना

उपर्युक्त वर्णित स्तरों से इसकी संरचना बनती है। ग्राम पंचायत, पंचायत राज का प्रथम स्तर है। यह ग्राम सभा का प्रशासनिक निकाय (इक्जीक्यूटिव बाडी) है। इस निकाय में 5 से लेकर 31 तक सदस्य हो सकते हैं। इन सदस्यों को पंच कहते हैं। जम्मू और कश्मीर को छोड़कर अन्य सभी राज्यों में इन पंचों का चुनाव गुप्त मतदान पद्धति से कराया जाता है। सरपंच के चुनाव भी सीधे और गुप्त मतदान द्वारा कराये जाते हैं। ग्राम पंचायत, पंचायत समिति के लिये अपना प्रतिनिधि चुनती है।

पंचायत समिति पंचायती राज का माध्यमिक स्तर है। इसका निर्माण खण्ड स्तर पर (1) पंचों द्वारा चुने हुए प्रतिनिधियों, (2) खण्ड की प्रत्येक नगर पालिका से चुने गए एक प्रतिनिधि, (3) अनुसूचित जातियों, जनजातियों एवं महिलाओं, सहकारी संस्थाओं के निदेशकों तथा (4) ग्रामीण जीवन तथा विकास के अनुभवी क्षेत्रीय निवासियों के प्रतिनिधियों की निर्दिष्ट संख्या से होता है। विभिन्न राज्यों में इस समिति को अलग-अलग नामों से जाना जाता है। उत्तर प्रदेश में इसे क्षेत्र समिति तथा गुजरात में इसे तालुका कहते हैं।

पंचायती राज का तीसरा स्तर जिला परिषद होता है। जिला परिषद का गठन (1) खण्ड प्रमुख्य पंचायत समिति के अध्यक्ष, (2) क्षेत्रीय एम.एल.ए., एम.एल.सी. तथा एम.पी. (मतदान के अधिकार के साथ-अथवा विहीन), (3) अनुसूचित जातियों/जनजातियों, महिलाओं तथा मनोनीत सदस्यों के मतों से चुने लोगों, जिनकी सदस्यता निर्धारित है, के प्रतिनिधियों, (4) सहकारी समितियों और नगर पालिकाओं आदि के द्वारा होता है। जिलाधीश इसका सरकारी प्रतिनिधि होता है। जिला परिषद के अध्यक्ष का चुनाव सीधे अथवा गुप्त मतदान द्वारा होता है। इसका कार्यकाल 3 से 5 वर्ष का होता है। जिला परिषद का राज्य और केन्द्र सरकार से सम्बन्ध जिले के एम.एल.ए. और एम.एल.सी. एवं एम.पी. द्वारा होता है।

महत्वपूर्ण कार्य

ग्राम पंचायत के कार्य के अन्तर्गत ग्रामीण विकास एवं कल्याण के अनेक कार्यक्रम समाहित किये गये हैं। इनमें स्वास्थ्य, शिक्षा, सफाई, बाल-कल्याण, सामुदायिक स्थानों की मरम्मत तथा पंचायत समिति के सदस्यों के चुनाव की व्यवस्था करना आदि मुख्य माने जा सकते हैं। इस प्रकार इसके निर्धारित कार्यों का उद्देश्य यह था कि सरकार की

आर्थिक सहायता का, चुने हुए प्रतिनिधियों, ग्रामीण जनता तथा सरकारी अफसरों से सहयोग ग्रामीण विकास में इस प्रकार लिया जाये कि देश का बहुमुखी विकास हो सके ।

पंचायती राज का सबसे अधिक विकास पं. नेहरू द्वारा किया गया । इसके बाद लगभग सभी राज्य इस संस्था के प्रति अपेक्षित रुचि प्रदर्शित नहीं कर सके जिसके परिणामस्वरूप इसे दी जाने वाली सहायता भी कुछ राज्यों में धीरे-धीरे बंद कर दी गयी । स्थिति धीरे-धीरे यहां तक पहुंच गयी कि कुछ राज्यों में इसके चुनाव भुला-से दिये गये । इस प्रकार 1956-65 का समय इसके विकास का काल तथा 1965-69 का समय इसमें रुकावट का तथा 1969 के आस-पास का समय इसकी अवनति का था ।

मूल्यांकन

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि भारत की अन्य महत्वपूर्ण संस्थाओं (जाति एवं परिवार आदि) की भांति पंचायत भी अति प्राचीन और अद्वितीय संस्था है । इसके स्वरूप में भी समय के साथ अनेक परिवर्तन हुए जो कि स्वाभाविक ही कहे जा सकते हैं । स्वतंत्रता के बाद महात्मा गांधी के प्रभाव और पं. जवाहरलाल नेहरू के प्रयास से प्रस्फुटित ग्रामीण विकास एवं पुनरुत्थान के अनेक कार्यक्रम बाद के राष्ट्र नायकों द्वारा जुड़ते जा रहे हैं । परन्तु अनेक दोषों के चलते यह संस्था अपने गुरुत्तर उत्तरदायित्व का निर्वाह नहीं कर पा रही है । अनेक सरकारी और गैर सरकारी मूल्यांकन समितियों ने भी इसमें अनेक दोष पाये हैं । इनमें से कुछ मुख्य इस प्रकार दिये जा सकते हैं ।

निर्वाचन पद्धति के तकनीकी दोषों एवं अन्य कारणों के चलते आजकल ग्राम पंचायतों से लेकर जिला परिषदों तक अयोग्य व्यक्तियों का कब्जा होता जा रहा है । अभी हाल में हुए चुनावों में यह देखने में आया है कि सर्वत्र धन का ही बोलबाला रहा । उत्तर प्रदेश में जिला परिषद के अध्यक्षों के चुनाव में जीते कई निर्दलीय और सम्पन्न प्रत्याशी इसके प्रमाण हैं । ऐसे लोग जन-साधारण के लिये बनाई योजनाओं का लाभ उन्हें न दिलाकर अनुपयुक्त और साधन सम्पन्न लोगों को और अधिक लाभान्वित होने में सहायता करते हैं । इस प्रकार के लोगों का नेतृत्व पाकर सारी संस्थाओं के आदर्श धीरे-धीरे समाप्त होने लगते हैं । साथ ही ये दलगत राजनीति और गुटबन्दी के भी शिकार होते जा रहे हैं । चुनाव अधिकार शैक्षणिक योग्यता न होने के कारण बल और तिकड़म से, अशिक्षित पदाधिकारियों का भी चुनाव हो जाता है । ऐसे लोगों को न तो अपने अधिकार और कर्तव्य का ही ज्ञान होता है और न ही ये किसी उत्तरदायित्व को निभा पाते हैं । यह भी देखने में आता है कि इस स्तर पर चलायी जा रही विभिन्न योजनाओं के निर्माता और देखरेख करने वाले बहुत से कर्मचारी और अधिकारी ऐसे हैं जिन्हें विकास और परिवर्तन में कोई रुचि नहीं है । इसके अतिरिक्त तथाकथित जनप्रतिनिधियों की मिलीभगत से वे सरकारी सहायता और योजनाओं से स्वयं लाभ उठाते हैं । यही कारण है कि योजनाओं के लाखों के आबंटन वास्तविक व्यय के समय हजारों में बदल जाते हैं । पंचायती राज संस्था में धन की कमी होती है जिससे वे आवश्यक व्यय भी कभी-कभी नहीं कर पाते हैं ।

सुझाव

पंचायती राज के विभिन्न स्तरों पर जो दोष आये हैं उन्हें दूर करने के लिए कुछ सुझाव इस प्रकार दिये जा सकते हैं—

सबसे अधिक आवश्यकता इस बात की है कि चुनाव की प्रक्रिया और मतदान प्रणाली में व्याप्त दोषों को दूर किया जाये जिससे अयोग्य लोग इस महत्वपूर्ण संस्था में प्रवेश न पा सकें । जनवरी, 1979 में ही सम्पन्न हुए जिला परिषदों के चुनाव में जिस प्रकार धन के बल पर अयोग्य लोगों ने कब्जा जमाया है उससे जनतन्त्र और चुनाव की प्रक्रिया का मखौल उड़ता है । इसमें खर्च होने वाले धन की सीमा निर्धारण कर नियम के उल्लंघनकर्ता के चुनाव को ही अवैध ठहराया जाना चाहिये । चुने हुए व्यक्तियों के अतिरिक्त सरकार द्वारा जो सदस्य मनोनीत होते हैं, वे विकास में रुचि रखने वाले और पढ़े लिखे होने चाहिए । केवल पार्टी और राजनीतिक आधार पर ही उनका मनोनयन नहीं होना चाहिए । चुनाव प्रक्रिया में सुधार द्वारा शिक्षित और योग्य व्यक्तियों को ही चुनाव में खड़े होने की अनुमति मिलनी चाहिए । इससे इस प्रणाली के लाभ उठाए जा सकते हैं ।

कुछ लोगों का यह कहना है कि इन संस्थाओं का कार्यकाल इतना कम होता है कि जब तक कुछ चुने हुए प्रतिनिधि अपने अधिकार और कर्तव्यों को समझकर योजनाएं बनाते हैं तथा क्रियान्वयन की बारीकियों को समझते हैं तब तक उनका कार्यकाल ही समाप्त हो जाता है, इसलिए उनका कार्यकाल बढ़ाने की आवश्यकता है । यदि कोई चुना हुआ

सदस्य ठीक से कार्य नहीं करता अथवा उसका आचरण संदिग्ध हो तो ऐसी स्थिति में उसकी सदस्यता ही समाप्त हो जानी चाहिए। इस प्रकार उसे वापस बुलाने की व्यवस्था होनी चाहिए। प्रायः ऐसा देखा जाता है कि पंचायती राज के विभिन्न स्तरों के सदस्यों को कार्यकाल समाप्त होने तक न तो अपने अधिकार और कर्तव्यों की और न सरकारी सहायता और योजनाओं (स्वास्थ्य, शिक्षा, कृषि, पशुपालन, सहकारिता और नियोजन आदि) की ही जानकारी हो पाती है। ऐसी स्थिति में इन विभिन्न प्रकार की जानकारियों के लिए उन्हें आवश्यक प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए। गांव की समस्याओं को मिल-बैठकर समझने के लिए हर 15वें दिन बैठकें अनिवार्य रूप से होनी चाहिए। कम से कम हर खण्ड में एक माडल ग्राम पंचायत के निर्माण पर बल दिया जाए जिसको देखकर अन्य खण्डों में भी उसी प्रकार का माडल विकसित करने के प्रति जन-प्रतिनिधि प्रेरित हो सकें। देखने में आता है कि चुने हुए प्रतिनिधियों के अधिकार बड़े ही सीमित होते हैं। प्रशासनिक अधिकारियों के अधिकार अनेक क्षेत्रों में अधिक होते हैं। जनप्रतिनिधियों को अनेक मुद्दों पर अधिकारियों से ही सिफारिश करनी पड़ती है। इसलिए इन प्रतिनिधियों की यथा सम्भव अधिकार वृद्धि भी आवश्यक है।

इस वर्ष जनवरी के अन्तिम सप्ताह में चार दिनों तक चलने वाले 'पंचायती राज सम्मेलन' में उपर्युक्त मुद्दों पर भी विचार-विनिमय किया गया। इस सम्मेलन में देश के ग्यारह उत्तरी-पश्चिमी राज्यों तथा केन्द्र शासित क्षेत्रों के ग्राम पंचायतों के आठ हजार जन प्रतिनिधियों ने भाग लिया। सबसे महत्वपूर्ण बात यह रही कि इन्हें देश के प्रधानमंत्री के समक्ष अपने विचारों को रखने का अवसर प्राप्त हुआ। इनमें जिन मुख्य बिन्दुओं पर सहमति व्यक्त की गयी उनमें एक प्रकार की पंचायती प्रणाली, विकास कार्यक्रमों के निर्माण और उनके कार्यान्वयन में ग्राम्य स्तर तक जनप्रतिनिधियों की सहभागीदारी, ग्राम्य विकास के लिए वित्तीय प्रबन्ध, पंचायती राज के अधिकार का विस्तार तथा जिला परिषदों का चुनाव निर्वाचन आयोग के माध्यम से तथा एक स्तर तक खुला मतदान कराने की व्यवस्था आदि मुख्य माने जा सकते हैं। सम्मेलन में और सम्मेलन से बाहर राष्ट्रीय विकास योजनाओं की शुरुआत ग्राम्य एवं खण्ड स्तर से प्रारम्भ करने की बात प्रधानमंत्री द्वारा कहा जाना विशेष महत्व रखता है।

अतः इस अति प्राचीन और जनतन्त्र की आधारभूत संस्था में आये दोषों के निवारण के लिए विचार-विमर्श प्रारम्भ होना इसके हित में है। परन्तु यदि समय रहते इसमें सुधार नहीं किया गया तो जनतंत्र की नींव ही खिसक सकती है। जनप्रतिनिधि और सर्वोच्च शासक के रूप में प्रधानमंत्री द्वारा इसके महत्व की पुनर्स्थापना और उन्नयन हेतु चिन्ता और प्रयास करने का संकल्प सर्वथा उचित है। इस सम्बन्ध में लोक सभा में लाया गया विधेयक सरकार की मनसा का द्योतक है।

प्राध्यापक, समाजशास्त्र,
काशी विद्यापीठ

अब मैं आपको सामुदायिक विकास के बारे में दो शब्द कहना चाहता हूं। मैं इसे बहुत महत्व देता हूं और प्रायः इसकी सराहना करता हूं। मुझे इस बात में कोई संदेह नहीं है कि जो कुछ हुआ है, उन सबके बावजूद और हमारी तमाम खामियों के होते हुए भी, सामुदायिक विकास योजना ने गांवों को बदल दिया है और वह उसका काया कल्प कर रही है। और यह तमाम कारखानों का अंतिम विश्लेषण करने की बजाए कहीं ज्यादा महत्वपूर्ण है। विशेषकर पंचायतों को और अधिक अधिकार देने की दिशा में हाल की गतिविधियों को देखते हुए .....जिसे पंचायती राज कहा जाता है.... मैं महसूस करता हूं कि क्रांतिकारी परिवर्तन हो रहा है। सदन को इस बात की तारीफ करनी चाहिए क्योंकि यह हमारी योजना का, विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों और कृषि उत्पादन का बहुत महत्वपूर्ण हिस्सा है।

जवाहरलाल नेहरू, लोक सभा में 22 अगस्त 1960 को भाषण

पंचायती राज विधेयक : संभावनाएं

डा. एस.एम. शाह

64 वें संविधान संशोधन विधेयक से राज्य विधान मंडलों को ऐसे अधिकार प्राप्त हो गये हैं जिससे वे स्वशासी संस्थाओं की स्थापना के लिए पंचायतों को समुचित अधिकार प्रदान कर सकें। पिछली 15 मई, 1989 को यह विधेयक लोकसभा में पेश किया गया।

प्रत्यक्ष प्रजातंत्र

इस विधेयक में पंचायतों को नये और विस्तृत अधिकार प्रदान किये गए ताकि वे निचले स्तर पर अपनी भूमिका को सही तरीके से निभा सकें। संक्षेप में कहें तो इस विधेयक में 1986 की डा. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी कमेटी की लगभग सभी सिफारिशों को स्वीकार कर लिया गया है। इस कमेटी की सबसे महत्वपूर्ण सिफारिश यह थी कि लोकसभा और विधान सभाओं के बाद, पंचायती राज संस्थाओं को सरकार के तीसरे स्तर के रूप में संवैधानिक मान्यता मिले। कमेटी ने ग्राम सभा को प्रत्यक्ष लोकतंत्र का साकार रूप माना।

64वां विधेयक

पंचायती राज संस्थाओं के दो स्तर हों या तीन (ग्राम-स्तर, ब्लाक-स्तर और जिला-स्तर), इस बारे में काफी समय से विवाद रहा है। इस विधेयक ने इस विवाद को शान्त कर दिया है। इसमें स्पष्ट रूप से कहा गया है कि प्रत्येक राज्य में ग्राम-स्तर, मध्य-स्तर और जिला-स्तर पर पंचायतों का गठन किया जायेगा। पंचायतों की प्रत्येक सीट, पंचायत के निर्वाचन क्षेत्र से, चुनाव द्वारा भरी जायेगी।

यह विधेयक सत्ता को पंचायतों को सौंपे जाने के पक्ष में है। इसी उद्देश्य के लिए इसमें इस बात का प्रावधान है कि हर 5 साल के बाद राज्य वित्त आयोग का गठन किया जाये। आयोग उन सिद्धान्तों को सुनिश्चित करे जिसके आधार पर पंचायतों को कर, चुंगी, फीस आदि वसूलने के अधिकार सौंपे जा सकें। भारत के नियंत्रक और महालेखा परीक्षक को पंचायतों के हिसाब का लेखा-जोखा रखने का काम सौंपा गया है।

मतदाता सूची बनाने के काम का निरीक्षण करने, इस बारे में आवश्यक दिशा-निर्देश देने और इस कार्य को नियंत्रित करने की जिम्मेदारी चुनाव आयोग को सौंपी गयी है। आयोग पंचायतों के चुनाव भी करायेगा। 11वीं अधिसूची (अनुच्छेद 243) में 29 ऐसे विषय हैं जो रोजमर्रा के कार्यकलापों के लिए पंचायतों के अधिकार क्षेत्र में होंगे।

जन शक्ति

निस्संदेह यह विधेयक एक प्रशंसनीय कदम है। 1957 के बलवन्तराय मेहता अध्ययन दल ने जिस लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण का विचार रखा था, यह विधेयक उसी को और आगे ले जाता है। इससे लोगों की लोकतंत्र में भागीदारी निश्चित रूप से बढ़ेगी और लोगों को और अधिक अधिकार मिलेंगे।

लेकिन प्रश्न यह है कि क्या विधेयक वे पर्याप्त अधिकार प्रदान करता है जिनसे पंचायतें स्वशासी संस्थाओं के रूप में कार्य कर सकें? क्या इस विधेयक के प्रावधान इसके उद्देश्यों को पूरा करने के लिए काफी हैं? यदि नहीं, तो कौन-कौन सी कमियां हैं और उन्हें कैसे दूर किया जा सकता है?

क्रांतिकारी कदम

देश में राजनीतिक संस्थाओं के लोकतंत्रीकरण के लिए पंचायती राज विधेयक सबसे क्रांतिकारी कदम है। स्वतंत्र भारत में, 50 के दशक के आरंभ में लाये गये जमींदारी उन्मूलन विधेयक को छोड़कर, शायद ही कोई विधेयक इतनी चर्चा का विषय बना हो।

हालांकि इसमें एक 'कानूनी-चौखटे' का प्रावधान है लेकिन यह विधेयक प्रशासनिक ढांचे के बारे में खामोश है। याद रहे कि सिंघवी कमेटी ने अपनी रिपोर्ट में 'आयोजना और विकास के लिए एक समन्वित प्रशासनिक ढांचे' पर जोर दिया था। शायद इसे राज्य विधान मंडलों पर छोड़ दिया गया है कि वे स्थानीय परिस्थितियों के अनुरूप

आवश्यक प्रशासनिक ढांचे की व्याख्या करें और चुने गये प्रतिनिधियों तथा नौकरशाही के बीच रिश्तों को परिभाषित करें। इस समय यह कहना मुश्किल है कि वे इस काम में कहां तक सफल हो पायेंगे।

उद्देश्य

इस विधेयक के उद्देश्य के बारे में प्रधानमंत्री ने कहा कि कई कारणों से विभिन्न राज्यों में पंचायती राज संस्थायें कमजोर और प्रभावहीन हो गयी हैं। वर्तमान व्यवस्था की कमियों को देखते हुए और संविधान के 40वें अनुच्छेद में निहित राज्य के दिशा-निर्देश तत्वों को ध्यान में रखते हुए, पंचायत के सम्बंध में संविधान में एक और खंड जोड़ा जा रहा है।

सरकार ने, पंचायती संस्थाओं के तीन स्तरीय ढांचे की रूपरेखा के सम्बन्ध में अशोक मेहता कमेटी, 1978 की मुख्य सिफारिशों को स्वीकार कर लिया है। विधेयक में मंडल, ब्लाक या पंचायत समिति जैसे शब्दों का इस्तेमाल नहीं किया गया है। इसमें 'मध्य-स्तर' शब्द का प्रयोग किया गया है। अत: जनसंख्या के आधार पर ग्राम स्तरों को ध्यान में रखा गया है। यह आर्थिक आयोजना और भौतिक आयोजना दोनों दृष्टि से महत्वपूर्ण है।

पंचायत क्षेत्र

विधेयक ने पंचायतों के सभी स्तरों के चुनावों के संचालन, निर्देशन और नियंत्रण का उत्तरदायित्व चुनाव आयोग को सौंपा है। पंचायतों के चुनावों में जनसंख्या और सीटों का वही अनुपात होगा जो विधान सभा चुनावों में होता है, और जहां तक संभव होगा यह अनुपात पूरे राज्य में एक समान रहेगा।

पंचायतों के चुनाव प्रत्यक्ष हों या अप्रत्यक्ष इस बारे में विधेयक में स्पष्ट दिशा-निर्देश दिये गये हैं। बलवन्तराय मेहता कमेटी, 1957 और अशोक मेहता कमेटी, 1978 की इस विषय पर स्पष्ट राय नहीं थी। बलवन्तराय मेहता कमेटी का मत था कि पंचायत समिति के चुनाव अप्रत्यक्ष होने चाहिए। अशोक मेहता कमेटी का मत था कि हर स्तर पर "प्रत्यक्ष रूप से चुने हुए तत्वों का अन्य तत्वों पर बाहुल्य हो।"

वर्तमान विधेयक 'नामांकन' या 'सहयोजन' के पक्ष में बिल्कुल नहीं है। स्वतंत्रता के लगभग 40 वर्षों में भारतीय मतदाता काफी परिपक्व हो चुका है। विधेयक ने मतदाता में अपना विश्वास व्यक्त किया है। विधेयक के अनुसार सभी पंचायती सीटें अपने-अपने चुनाव क्षेत्रों से सीधे चुनावों द्वारा भरी जायेंगी। इस प्रकार यह विधेयक लोगों को अधिकार देने वाली बात को चरितार्थ करता है। चुने हुए प्रतिनिधियों को हटाये जाने का केवल एक ही तरीका होगा – कम से कम दो तिहाई सदस्यों का बहुमत उपस्थित हो और इस सम्बन्ध में मतदान करें।

नया जनादेश

पंचायत का कार्यकाल इसकी पहली बैठक की तिथि से केवल पाँच वर्ष का होगा। इस अवधि की समाप्ति पर पंचायत अपने आप भंग मानी जायेगी। पंचायत भंग होने के छः महीने के भीतर चुनाव कराना आवश्यक होगा। तीनों स्तरों पर पंचायतों को हर पांच साल बाद जनादेश प्राप्त करना होगा। इससे पंचायतों में सही नेतृत्व का सतत् प्रवाह सुनिश्चित हो सकेगा। पांच वर्ष का समय एक चुने हुए प्रतिनिधि के लिए अपनी योग्यता दिखाने के लिये पर्याप्त है।

राज्य विधान मंडलों को अधिकार

विधेयक सत्ता के विकेन्द्रीकरण की दिशा में एक कदम है। इसका उद्देश्य राज्य के अधिकारों का अतिक्रमण नहीं है। पंचायतों के चुनावों का उत्तरदायित्व राज्य विधान मंडलों पर ही है। विधान मंडल ही चुनाव कराने, मतदाता सूची तैयार कराने आदि का प्रबन्ध करेंगे।

नई शुरूआत

विधेयक में वर्तमान पंचायतों को, इस विधेयक के लोकसभा के वर्तमान अधिवेशन में पास किये जाने तक, काम करते रहने का प्रावधान है। मगर हो सकता है कि कई राज्यों में पंचायतें, अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और महिलाओं के आरक्षण को देखते हुए, दोबारा जनादेश प्राप्त करना चाहें। हमें ऐसी प्रवृत्ति को प्रोत्साहित करना चाहिए।

चुनाव आयोग पर पंचायतों के लिए मतदाता सूची तैयार करने का अत्यधिक भार आ गया है। मतदाता की आयु 18 वर्ष करने से तो यह बोझ और अधिक हो जायेगा। 18 से 21 वर्ष के युवाओं को मतदाताओं में शामिल करने से चुनावों में एक नई रंगत और हलचल भी आ जायेगी। इससे पुरानी संरक्षणवादी और सामन्तवादी जंजीरे टूटेंगी। युवक चाहते हैं कि उन्हें प्रत्येक व्यक्ति स्तर पर ठीक व्यवहार मिले। वे स्वावल

बनना चाहते हैं। समाज-शास्त्रियों ने इस ओर ध्यान दिया है। युवाओं के चुनावों में भागीदार बन जाने से पंचायतों की कार्य शैली को नये आयाम मिलेंगे।

एक अर्थ में, पंचायती राज संस्थाओं का पहला वर्ष, भारतीय राजनीति में लोगों की भागीदारी के सम्बन्ध में बहुत महत्वपूर्ण होगा। इस सम्बन्ध में पिछले कई अध्ययनों से पता चलता है कि पंचायतों पर कुलीन भू-स्वामियों और प्रभावशाली वर्ग का अधिकार रहा है और यह भी कि पंचायतों का नेतृत्व कमजोर तबकों के प्रति उदासीन रहा है। यद्यपि पंचायतों में अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और महिलाओं को थोड़ा बहुत प्रतिनिधित्व मिला भी, लेकिन यह प्रतिनिधित्व चुनाव के आधार पर न होकर नामांकन या समायोजन के आधार पर था। अतः ये लोग अपनी सही भूमिका निभाने में असमर्थ रहे। वास्तव में पंचायतों के कमजोर होने का एक महत्वपूर्ण कारण यह भी रहा है कि इनमें समाज के दुर्बल वर्गों का पूरा योगदान नहीं है।

अनुसूचित जातियों-अनुसूचित जनजातियों को अधिकार

अनुसूचित जातियों-अनुसूचित जनजातियों को पंचायतों के तीनों स्तरों में आरक्षण प्रदान करके इन्हें विकास प्रक्रिया में भागीदार बनाने का प्रयत्न किया गया है।

हर पंचायत में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षण होगा। शीघ्र ही पंचायत में, सीधे चुनी गयी कुल सीटों और अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों का वही अनुपात हो जायेगा जो संबंधित क्षेत्र की कुल जनसंख्या और वहां की इन जातियों के बीच है। किन्तु जहां अनुसूचित जातियों या अनुसूचित जनजातियों की जनसंख्या अपर्याप्त हो वहां की पंचायतों में भी कम से कम एक सीट अनुसूचित जातियों के लिए और एक अनुसूचित जनजातियों के आरक्षित होगी। इस प्रकार पंचायतों में अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों की अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षित होगी। इस प्रकार और अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षित सीटों में से 30 प्रतिशत सीटें, इन जातियों की महिलाओं के लिए आरक्षित होंगी।

महिलायें केन्द्रीय स्थिति में

विधेयक विकास में महिलाओं के योगदान का सिद्धान्त स्वीकार करता है। अब बहुत सी गृहणियां लोक प्रतिनिधि निर्वाचित होंगी। महिलायें रोजगार कार्यक्रमों, वानिकी कार्यक्रमों, भूसंरक्षण, मत्स्य विकास, रेशम कीट पालन, कुटीर उद्योग, दुकानों, पेयजल आपूर्ति कार्यक्रमों, स्कूलों, स्वास्थ्य केन्द्रों और ग्रामीण विद्युतीकरण आदि क्षेत्रों में काम करने के और अधिकारों की मांग करेंगी। ये महिलाएं 'छोटे कामों' को पसन्द करती हैं – ऐसे काम जिनका वे बिना किसी मध्यस्थ के पूरा लाभ उठा सकें।

पंचायतों के तीनों स्तरों पर, सीधे चुने जाने वाली कुल सीटों का 30 प्रतिशत महिलाओं के लिए आरक्षित होगा। इस प्रकार महिलाएं पंचायती राज संस्थाओं में एक तिहाई से अधिक प्रतिनिधित्व करेंगी।

महिलाओं के लिए इस आरक्षण का तर्क यह है कि पंचायतें विकास की कई योजनायें लागू करेंगी – जैसे आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय के लिए योजना बनाना और इन योजनाओं को लागू करना। आंगनवाड़ी, समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम, जवाहर रोजगार योजना, ग्रामीण जल आपूर्ति कार्यक्रम, प्रौढ़ महिलाओं के लिए शिक्षण, महिला मंडल, इंदिरा आवास योजना जैसे कार्यक्रमों का उद्देश्य ग्रामीण महिलाओं की भी स्थिति सुधारना है। लेकिन इनके लाभ महिलाओं तक पूर्णरूप से नहीं पहुंच रहे हैं। बैंकों द्वारा महिलाओं को दिये जाने वाली ऋणों की संख्या और मात्रा भी बहुत कम है। यही बात समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के बारे में है। विकास प्रक्रिया में महिलाओं की स्थिति हाशिए पर है, हालांकि उत्पादन या पारिवारिक आय में उनका योगदान एक तिहाई है।

महिलाओं को आरक्षण प्रदान करके उन्हें विकास प्रक्रिया के केन्द्र में लाने का प्रयत्न किया गया है। वे अब गूंगी गुड़िया नहीं रहेंगी। बल्कि अपनी शक्ति और उपस्थिति दर्ज करा सकेंगी। हम इस पवित्र उद्देश्य में कितना सफल हो पाते हैं, यह हमारे सामाजिक ताने-बाने, संस्थागत व्यवस्था और सामाजिक व्यवहार पर निर्भर करेगा। फिर भी यह प्रयोग स्वागत योग्य है।

लोकसभा और विधान सभाओं को मिलाकर देखें तो इनमें महिलाओं का प्रतिनिधित्व 7 प्रतिशत बैठता है। पंचायती राज विधेयक आ जाने के बाद महिलाओं का प्रतिनिधित्व एक तिहाई से अधिक हो जायेगा (महिलायें अनारक्षित सीटों पर भी चुनाव लड़ सकती हैं)। चुनावों के

बाद, महिलाओं का प्रतिनिधित्व चौगुना हो जायेगा।

कई अध्ययनों के परिणामस्वरूप 'कोई नहीं सुनता' वाली बात सामने आई है। विशेष रूप से कमजोर तबकों की ओर बहुत कम ध्यान दिया जाता है। चुनावों में इन वर्गों को और अधिक अधिकार दिये जाने से इस स्थिति से मुक्ति मिल जायेगी। इससे कार्यक्रमों की वितरण व्यवस्था सुधरेगी। और दरिद्रनारायण को अपने उचित लाभ प्राप्त होंगे। राजनीतिक रूप से अपेक्षाकृत अधिक जागरूक राज्यों, पश्चिम बंगाल और केरल में, नई पंचायतों के कार्यकलाप लोगों की रुचि का कारण बनेंगे।

पंचायती राज संस्थाओं के चुनावों में स्थानीय स्तर पर राजनीतिक दलों की सक्रियता बढ़ेगी। राजनीतिक पिरामिड का आधार अधिक विस्तृत बनेगा, और शायद अधिक मजबूत भी।

1985 की जी.वी. के राव कमेटी की गणना के अनुसार, देश के विभिन्न राज्यों में 2,17,300 ग्राम पंचायतें, 4,526 पंचायत समितियां और 347 जिला परिषदें पहले ही स्थापित हो चुकी हैं।

वित्तीय हस्तांतरण

प्रत्येक पांचवें वर्ष राज्यपाल द्वारा एक वित्त आयोग की स्थापना की जायेगी। इस आयोग का उद्देश्य राज्य में पंचायतों की वित्तीय स्थिति का पुनरावलोकन; उन करों, चुंगी आदि के बारे में सलाह देना जिन्हें वसूलने का अधिकार पंचायतों को प्रदान किया गया हो; राज्य और पंचायतों के बीच साधनों के वितरण; राज्यों के समेकित कोष से पंचायतों को अनुदान आदि के क्षेत्र में सलाह देना है।

केन्द्र में तो एक वित्त आयोग है लेकिन बहुत कम राज्यों में ऐसा कोई आयोग है। 1960 में गुजरात के बड़ोदा जिले में पंचायतों के काम-काज के बारे में हुये अध्ययन में पंचायत-वित्त-आयोग बनाने की सिफारिश की गई थी। उस सिफारिश का फल अब सामने है।

अब लगभग 25 राज्य-वित्त-आयोग स्थापित किये जायेंगे। ये आयोग सम्बन्धित राज्यों को पंचायतों के विषय में अतिरिक्त सलाह भी देंगे। अभी यह पता नहीं कि केन्द्रीय वित्त आयोग की तरह क्या इन आयोगों का मुखिया भी एक न्यायधीश होगा। अगर ऐसा हो सके तो इन आयोगों की निष्पक्षता के सम्बन्ध में विश्वसनीयता बढ़ेगी। इन आयोगों में एक लोक वित्त विशेषज्ञ भी सदस्य होना चाहिए। आशा है कि इन आयोगों के बीच स्वस्थ प्रतियोगिता अवश्य होगी और लोग इनके क्रियाकलापों की समीक्षा, तुलना अवश्य करेंगे।

पंचायतों की आय मुख्य रूप से करों, फीस, भू-राजस्व, लाभकारी उद्योगों की आय, सरकार से अनुदान और ऋण के रूप में होती है। प्रोत्साहन अनुदानों और लाभकारी उद्योगों का विस्तार किया जाना चाहिए। स्थानीय स्ववित्त के मुख्य स्रोत संपत्ति कर को अधिकतम दर से लगाया जाना चाहिए। राज्य वित्त आयोग की रिपोर्ट और महालेखा अधिकारी के लेखे-जोखे विधान मंडलों में रखे जाना एक स्वागत योग्य कदम है। इससे सम्बन्धित राज्यों को इन रिपोर्टों पर बहस और चर्चा के पूर्ण अधिकार और अवसर प्राप्त होंगे।

पंचायत विकास निगम

वित्त आयोग धन का वितरण तो कर सकता है लेकिन धन उत्पन्न नहीं कर सकता। इस उद्देश्य के लिए हर राज्य में पंचायत विकास निगम की व्यवस्था की गई है। यह निगम साधन इकट्ठे करने, ग्रामीण बचत को बढ़ावा देने और ग्रामीण उद्योगों को बढ़ावा देने का कार्य करेगा। यहां आकर हमें पंचायतों की सीमाओं का भान होता है। पंचायतों को साधन उपलब्ध कराने के लिए और काम किये जाने की आवश्यकता है।

कार्मिकों को प्रशिक्षण

राज्यों को चाहिए कि वे प्रशिक्षण संस्थाओं को पुनर्जीवित करें। पंचायती राज परिषद को यह काम सौंपा जा सकता है। पंचायतों के विशेष पाठ्यक्रमों की व्यवस्था की जानी चाहिए। अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और महिलाओं को अलग से प्रशिक्षण की व्यवस्था की जानी चाहिए। इस दिशा में 'प्रशिक्षण पाठ्यक्रम' का प्रचार करने आदि में 'कुरुक्षेत्र' भी अच्छी भूमिका निभा सकता है।

अनुवाद-एस.सी. सक्सेना
जी–212, प्रीत विहार, दिल्ली –110092

पंचायती राज संस्थाओं की पुनर्स्थापना : 'लोक' की ओर अग्रसर भारतीय लोकतंत्र

नन्द लाल

आम चुनाव निकट होने के कारण भले ही प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी के वास्तविक इरादे पर विपक्षी महारथियों द्वारा शंका की जाये परन्तु यदि पूर्वाग्रहों को छोड़कर देखा जाये तो पंचायती राज व्यवस्था को संविधान में स्थान देने का कदम उठाकर राजीव ने वह कार्य किया है जो पिछले चार दशकों में किसी भी प्रधानमंत्री द्वारा नहीं किया गया यद्यपि उनकी ग्रामीण विकास को अथवा विकास के लाभ को घर-घर पहुंचाने की आकांक्षा हमारे वर्तमान प्रधान मंत्री से किसी रूप में कम नहीं थी। यथार्थ में यह कार्य संविधान निर्माण के समय ही हो जाना चाहिए था।

कई दशकों की उपेक्षा के बाद पंचायती राज एक बार फिर केन्द्रीय महत्व का स्थान प्राप्त कर रहा है। इन संस्थाओं की नये सिरे से पुनर्स्थापना के लिए सरकार द्वारा एक महत्वाकांक्षी खाके की घोषणा की गयी है और अनेक स्तरों पर इस पर विचार-विमर्श किया गया है। इन्हें पुनर्जीवित करने और तीन दशकों के कार्यकरण के दौरान इनमें आयी खामियों को दूर करने के उद्देश्य से संविधान का 64 वां संशोधन विधेयक संसद में पहले ही पेश किया जा चुका है। सरकार का पूरा का पूरा प्रयास संस्थात्मक पुनर्निर्माण के माध्यम से शक्ति का केन्द्रीकरण को रोकने और विकेन्द्रीकरण की दिशा में उन्मुख है। संविधान संशोधन के माध्यम से भारतीय राज्य व्यवस्था के तीसरे स्तर को औचित्यपूर्ण बनाने, पूरे देश में इनके संगठन में एकरूपता लाने, नियमित निर्वाचन को सुनिश्चित करने और इनके प्रभावशाली कार्यक्रम हेतु वित्तीय संसाधन जुटाने के प्रयास किये जा रहे हैं।

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 40 में राज्य को ग्राम पंचायतों के संगठन और उन्हें ऐसी शक्तियां प्रदान करने की दिशा में कदम उठाने का निर्देश दिया गया है जिससे वे स्व-सरकार की इकाई के रूप में कार्य कर सकें। पुनर्जीवित ढांचा न केवल आम जनमानस को निर्णय-निर्माण प्रक्रिया में ज्यादा सहभागिता प्रदान कर सकेगा वरन् उन्हें अपने विकास की गति और दिशा निर्धारित करने में भी सहायता करेगा। इससे राजनीतिक प्रक्रिया और संस्थाओं के प्रति जनता में पनप रही निराशा को भी कम किया जा सकेगा। इससे विकास परक नियोजन की उन विसंगतियों को भी कदाचित दूर किया जा सकेगा जो नियोजकों की अभिजनवादी पृष्ठभूमि के कारण सहज ही विकास प्रक्रिया में प्रविष्ठ हो गयी है।

1947 में ब्रिटिश साम्राज्यवाद के शिकंजे से मुक्त होने के उपरांत भारत ने आर्थिक विकास के नियोजन-बद्ध तरीके को अपनाया। विकास प्रक्रिया का मूल तत्व जन सहमति पर आधारित नियोजन था न कि शक्ति और भय पर। इस रणनीति के तहत् आधारभूत दर्शन यह है कि 6 लाख गांवों में रहने वाली ग्रामीण जनसंख्या को विकास प्रक्रिया में सम्मिलित किया जाये और उन्हें इसका लाभ उपलब्ध कराया जा सके। परन्तु नियोजित विकास के साढ़े तीन दशक बाद भी यह व्यवहार में सम्भव नहीं हो पाया है। कमोबेश रूप से योजना के निर्माण और क्रियान्वयन में आम आदमी की सहभागिता नहीं के बराबर है। प्रायः ये योजनायें ऊपर से आरोपित की जाती रही हैं न कि नीचे से विकसित। इससे भी अधिक दुःखदायी बात तो यह है कि नियोजन के माध्यम से करोड़ों रुपये व्यय होने के बावजूद इसके लाभ उस आम व्यक्ति तक कम ही पहुंचते हैं जिसको इसकी सर्वाधिक आवश्यकता है। यह हर्ष का विषय है कि दूर-दराज के प्रदेशों की अपनी यात्रा के दौरान हमारे प्रधानमंत्री को इस तथ्य का प्रत्यक्ष अहसास हुआ। सरकार द्वारा यह महसूस किया गया कि इस सार्थक नियोजन के लिये यह एक उत्तरदायी, संवेदनशील और प्रभावशाली प्रशासन अति आवश्यक है; नियोजन प्रक्रिया में आम आदमी की सहभागिता इसकी पूर्व शर्त है।

भारत में पंचायत व्यवस्था के अस्तित्व के संकेत प्राचीन काल से ही मिलते हैं। प्राचीन काल में भी पंचायतें सामाजिक जीवन एवं आर्थिक गतिविधियों की केन्द्र होने के साथ-साथ राजनीतिक स्व-शासक की केन्द्र बिन्दु होती थीं। लेकिन बरतानिया सरकार के समयकाल में इनका तेजी से ह्रास हुआ यद्यपि यह सत्य है कि लार्ड रिपन जैसे कतिपय ब्रिटिश वायसरायों ने इन्हें पुनर्जीवित करने का प्रयास किया। कहने का अभिप्राय यह है कि स्वतंत्रता के पूर्व भी

भारत में पंचायती संस्थाओं के बीज विद्यमान थे। भारतीय संविधान द्वारा राज्य को पंचायती राज संस्थाओं की स्थापना की दिशा में प्रयास का निर्देश दिये जाने के कारण इस उपक्रम को और बल मिला। बलवन्तराय मेहता समिति की सिफारिशों से पंचायती राज संस्थाओं को नयी प्राणशक्ति प्राप्त हुई। 1959-64 के मध्य का समयकाल इन संस्थाओं का स्वर्णिम काल था।

बलवन्तराय मेहता समिति (1957) की मुख्य सिफारिशें

पंचायती राज का ढांचा त्रि-स्तरीय होना चाहिये : ग्राम स्तर पर पंचायत, ब्लाक स्तर पर पंचायत समिति और जिला-स्तर पर जिला परिषद। पंचायतें पूरी तरह से निर्वाचित इकाइयां होनी चाहिए जिनमें महिलाओं के 2 और अनुसूचित जाति एवं जनजाति के एक-एक सदस्यों के प्रतिनिधित्व का प्राविधान होना चाहिए। पंचायत समिति जिसका स्वरूप एक कार्यकारिणी समिति जैसा हो, का गठन ग्राम पंचायतों द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से होना चाहिए। जिला परिषद का गठन भी नीचे की इकाई द्वारा होना चाहिए। इसका अध्यक्ष जिलाधिकारी हो।

पंचायतों को अपने क्षेत्र के भीतर होने वाले समस्त विकास कार्यों पर पूर्ण नियंत्रण दिया जाना चाहिये। सरकार का कार्य नियोजन, निरीक्षण और निर्देशक तक सीमित होना चाहिए।

केन्द्र अथवा राज्य सरकार द्वारा ब्लाक स्तर पर दी गयी समस्त आर्थिक सहायता पंचायत समिति के माध्यम से व्यय की जानी चाहिये।

जल-आपूर्ति, सफाई, प्रकाश व्यवस्था, सड़कों का रख-रखाव तथा भूमि प्रबन्ध ग्राम पंचायतों का अनिवार्य कर्तव्य निर्धारित किया जाना चाहिये।

इन पांच वर्षों में 2.25 लाख पंचायतों के गठन के माध्यम से देश की लगभग 44 करोड़ जनसंख्या को इनके प्रभाव क्षेत्र में लाया गया। 4,974 ब्लाकों में 4,033 में पंचायत समितियों की स्थापना की गयी और 399 जिलों में से 266 में जिला परिषदों का गठन हो गया। परन्तु यह उत्साह और गति क्षणिक सिद्ध हुई और 1965-69 के मध्य इन संस्थाओं की जड़ता में वृद्धि हुई तथा 1977 के आते-आते इनका पूर्णतया ह्रास हो गया। यह देखा गया कि क्रमशः इनकी गतिविधियां न्यूनतम हो गयी हैं। इनके संसाधन स्रोत भी कमजोर पड़ गये। राज्य सरकारों द्वारा भी इन पर नहीं के बराबर ध्यान दिया गया। 1977 में इन संस्थाओं में एक बार प्राण-वायु निवेशित करने के उद्देश्य से अशोक मेहता समिति का गठन किया गया। परन्तु समिति की सिफारिशों को अधिकांश मुख्य मंत्रियों का समर्थन न मिल सका। परिणामतः इन संस्थाओं की पुनर्स्थापना की दिशा में कुछ विशेष न किया जा सका।

अशोक मेहता समिति (1977) की मुख्य सिफारिशें

पंचायती राज का ढांचा त्रि-स्तरीय के स्थान पर द्वि-स्तरीय होना चाहिये : पहला जिला स्तर पर और दूसरा मण्डल स्तर पर।

जिला परिषदों का गठन प्रत्यक्ष निर्वाचन के आधार पर होना चाहिये। जिले की समस्त विकास परक गतिविधियां जिनका संचालन अब तक राज्य सरकार द्वारा किया जाता रहा है, जिला परिषद द्वारा किया जाना चाहिये।

जिलाधिकारी को जिला परिषद के अधीन किया जाना चाहिये। जिला परिषद का अध्यक्ष गैर-सरकारी व्यक्ति होना चाहिये।

जिला परिषद और मण्डल पंचायतों को पर्याप्त संसाधन हस्तांतरित किये जाने चाहिये।

पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक दर्जा दिया जाना चाहिये।

पंचायत चुनावों में राजनीतिक दलों को भाग लेने की सुविधा होनी चाहिये।

इन संस्थाओं के चुनाव समय पर अनिवार्यतः हो जाने चाहिये।

प्रधानमंत्री का पद ग्रहण करते ही श्री राजीव गांधी ने श्री जी.वी.के. राव की अध्यक्षता में एक समिति का गठन किया। इसका उद्देश्य ग्रामीण विकास और गरीबी उन्मूलन की वर्तमान प्रशासकीय व्यवस्था का पुनरीक्षण करना था। समिति ने इस बात से सहमति व्यक्त की कि समस्त विकास कार्यक्रमों का केन्द्र जिला परिषदों को ही बनाया जाना

चाहिये। समिति का यह भी विचार था कि पंचायतों के नियमित चुनाव होने चाहिये और जिला परिषद का अध्यक्ष प्रत्यक्षतः निर्वाचित होना चाहिये। इसके द्वारा जिला परिषद के मुख्य कार्यपालक के रूप में जिला विकास आयुक्त का नया पद सृजित करने की संस्तुति की गयी।

समिति की संस्तुति पर किसी प्रकार कार्रवाही करने के पूर्व सरकार ने लक्ष्मीमल्ल सिंघवी की अध्यक्षता में एक और समिति का गठन किया। समिति ने अन्य संस्तुतियों के अतिरिक्त पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक दर्जा दिये जाने की संस्तुतियां कीं। इसके अतिरिक्त जिलाधिकारियों के साथ राजीव गांधी ने प्रत्यक्ष वार्ता भी की। इन वार्ताओं में यह आम सहमति थी कि स्थानीय लोकतांत्रिक संस्थाएं एक उत्तरदायी और संवेदनशील सरकार के लिए पूर्व-शर्त है। इस पूरी वार्ता और विभिन्न स्तरों पर विचार-विमर्श का परिणाम संविधान के 64 वें संविधान संशोधन विधेयक के रूप में निकला।

प्रस्तावित संविधान संशोधन विधेयक की सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि इसके अधिनियम बन जाने के उपरांत पंचायतों का चुनाव राज्य सरकारों की कृपा पर निर्भर नहीं रहेगा। इससे पंचायतों को समुचित मात्रा में वित्तीय संसाधन प्राप्त हो सकेंगे जो इस प्रकार की संस्थाओं के सफल क्रियान्वयन के लिए आवश्यक हैं। पंचायतें न केवल आर्थिक विकास वरन् सामाजिक न्याय की भी वाहिनी बन सकेंगी। विपक्षी पार्टियों द्वारा यह कहकर इस युगांतकारी प्रयास को ओछा बनाने का प्रयास किया जा रहा है कि इससे राज्य सरकारों की स्वयात्तता प्रभावित होगी। यह तर्क और आशंका निराधार है। हां, यह जरूर सत्य है कि 64 वें संशोधन विधेयक के अधिनियम बन जाने के उपरांत पंचायती राज संस्थायें राज्य सरकारों के रहमो-करम पर निर्भर नहीं रह जायेंगी। निर्वाचन आयोग के तत्वावधान में चुनाव, वर्तमान सामाजिक, आर्थिक परिस्थितियों के सन्दर्भ में, सर्वाधिक निष्पक्ष होंगे। 'लोक को शक्ति' इस नयी क्रांति का नारा है। श्री राजीव गांधी ने स्वतंत्रता की क्रांति के बाद इसे दूसरी क्रांति की संज्ञा दी है। यह सत्य है कि इन संस्थाओं के सफल कार्यकरण के लिए वर्तमान सामाजिक-आर्थिक और शैक्षिक परिस्थितियों में भी पर्याप्त बदलाव लाना होगा। परन्तु फिर यह एक लम्बी प्रक्रिया है। यह आशा की जा सकती है कि जब ईमानदारी से शुरूआत कर दी गयी है तो इस पूरी प्रक्रिया को भी क्रमशः पूरा कर लिया जायेगा।

64वें संविधान संशोधन विधेयक की मुख्य बातें :

पंचायती राज संस्थाओं का गठन त्रि-स्तरीय होगा : ग्राम, मध्यवर्ती (ब्लाक, तालुका) तथा जिला स्तर पर। छोटे राज्य जिनकी आबादी 20 लाख से कम है वे द्विस्तरीय ढांचा भी अपना सकते हैं।

इन संस्थाओं के प्रति पांच वर्ष पर वयस्क मताधिकार के आधार पर नियमित निर्वाचन होंगे। ये निर्वाचन चुनाव आयोग के तत्वावधान में होंगे।

राज्य सरकार पंचायतों में संसद और विधान सभा के सदस्यों आदि को प्रतिनिधित्व देने के लिए मानदण्ड निर्धारित कर सकती है परन्तु इन्हें मत देने का अधिकार नहीं होगा।

पंचायतों में महिलाओं को 30 प्रतिशत आरक्षण प्राप्त होगा। यह आरक्षण अनुसूचित जातियों और जनजातियों को प्राप्त आरक्षण के अतिरिक्त होगा।

पंचायतों का कार्यकाल 5 वर्ष होगा। यदि किसी पंचायत का निर्धारित अवधि के पूर्व विघटन हो जाता है तो अधिकतम् 6 माह के भीतर इसका नया निर्वाचन कराना अनिवार्य होगा।

पंचायती राज संस्थाओं को अपने क्षेत्र के अन्तर्गत विकास की योजना निर्माण करने का अधिकार होगा। ये योजनाएं राज्य द्वारा निर्मित योजनाओं के तारतम्य में होंगी। इस प्रकार के 29 विषयों की संविधान के 11 वें अनुच्छेद के रूप में सम्मिलित किये जाने का प्रस्ताव है।

पंचायती राज संस्थाओं को समुचित वित्तीय संसाधन राज्य सरकारों द्वारा उपलब्ध कराये जायेंगे।

प्रति पांच वर्ष पर राज्यपाल द्वारा एक राज्य वित्तीय आयोग का गठन किया जायेगा। इसका दायित्व पंचायतों की वित्तीय स्थिति का पुनरीक्षण करना और वित्तीय मसलों पर राज्यपाल को परामर्श देना होगा।

राजनीति विज्ञान विभाग
काशी विद्यापीठ विश्वविद्यालय,
वाराणसी

क्या इसके परिणाम आशाओं के अनुरूप होंगे?

गिरीश के. मिश्र

15 मई, 1989 को लोक सभा में संविधान (चौंसठवां संशोधन) विधेयक, 1989 पेश करने में प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी ने एक पहल की है। इस विधेयक पर एक राष्ट्रीय परिचर्चा के पश्चात इसे संसद द्वारा भारत गणराज्य के 40वें वर्ष में पारित कर दिये जाने की सम्भावना है। संविधान के 8वें भाग के बाद नवां अध्याय जोड़ा जाएगा। दूसरे भाग में, सभी राज्यों के लिए ग्राम, मध्य स्तर, तथा जिला स्तर, पंचायत की तीन स्तरीय प्रणाली स्थापित करना अनिवार्य होगा। तथापि, जिन राज्यों की जनसंख्या 20 लाख से कम है, उनके लिए मध्य स्तर पर पंचायत बनाना अनिवार्य नहीं होगा।

विशेषताएं

विधेयक में यह व्यवस्था की गई है कि पंचायत के तीनों स्तरों में सभी सीटें सीधे चुनाव द्वारा भरी जाएंगी। इसमें अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और महिलाओं के समुचित प्रतिनिधित्व को सुनिश्चित किया गया है। पंचायतों को आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय की योजनाएं बनाने की, उन्हें अमल में लाने की शक्तियां और उत्तरदायित्व सौंपे जाएंगे। इससे विभिन्न स्तरों पर पंचायती राज संस्थाओं में प्रशासनिक क्षमता को सुदृढ़ करने और उनकी प्रशिक्षण आवश्यकताओं की पूर्ति करने की आवश्यकता होगी। हालांकि यह उत्तरदायित्व राज्य सरकारों का है, केन्द्र सरकार इस भार में हाथ बटाएंगी क्योंकि राज्यों के पास उपलब्ध साधन इस काम के लिए पर्याप्त नहीं होंगे। राज्य के समेकित निधि में से पंचायतों को सहायता अनुदान देने के लिए राज्य विधान मण्डल से प्राधिकरण प्राप्त करके पंचायतों का वित्तीय आधार ठोस बनाने के भी प्रयास किये जाएंगे और पंचायतों को निर्धारित करों, शुल्कों, उपकरों और प्रभारों के रूप में राजस्व का समायोजना भी करना होगा।

पंचायती राज संस्थाओं के कार्यों की समीक्षा करने से पता चला है कि बहुत से राज्यों में वे कमजोर और निष्प्रभावी हो गई हैं। इसके बहुत से कारण हैं जिनमें मुख्य हैं नियमित और समय पर चुनाव न होना, लम्बे समय तक सुपर सैशन, अनुसूचित जातियों, जनजातियों और महिलाओं जैसे कमजोर वर्गों का अपर्याप्त प्रतिनिधित्व, वित्तीय साधनों की कमी और उन्हें शक्तियों और उत्तरदायित्वों की अपर्याप्त सुपुर्दगी।

यदि देखा जाए तो देश के सभी राज्यों में पंचायती राज संस्थाएं विद्यमान हैं लेकिन वे कुछ ही राज्यों में सक्रिय हैं और कांग्रेस-इ के शासन वाले राज्यों सहित शेष अन्य राज्यों में निष्क्रिय हैं। आंशिक रूप से इसका कारण यह है कि बहुत से मुख्य मंत्री अपनी प्रतिष्ठा को बनाए रखने और नीतियों को चलाने में जिला कलक्टरों का इस्तेमाल करते हैं जिससे पंचायती राज संस्थाएं कमजोर पड़ जाती हैं। उन्हें उभर कर सामने आने और काम करने का मौका ही नहीं दिया जाता।

सकारात्मक पहलू

इस विधेयक के परिणामस्वरूप पंचायतें सभी स्तरों पर अपने उत्तरदायित्वों को पूरा करने के लिए मजबूत बनेंगी। चूंकि चुनावों की देखरेख चुनाव आयोग द्वारा की जाएगी इसलिए इन्हें नियमित रूप से और एक निर्धारित अन्तराल पर कराया जा सकेगा। इससे पंचायतों को लम्बे समय तक भंग रखना भी समाप्त होगा और पंचायतों में अनुसूचित जातियों, जनजातियों और महिलाओं को निश्चित प्रतिनिधित्व मिल सकेगा। केन्द्र का नियंत्रण होने के कारण इन पंचायतों की वित्तीय स्थिति में भी सुधार होगा।

इस वास्तविकता के सिवाय कि केन्द्र दलगत राजनीति राज्य सिद्धान्तों को न देखते हुए, बुनियादी स्तर पर स्थानीय निकायों को पुनर्जीवित करेगा, विधेयक में कोई नई बात नहीं कही गई है। हमारे देश में पंचायती राज पहले से विद्यमान है। गांव स्तर पर ग्राम पंचायतें अथवा ग्राम सभाएं हैं, मध्य स्तर, अर्थात ब्लाक और जिला स्तर पर क्रमशः पंचायत समितियां और जिला परिषदें हैं। उदाहरण के तौर पर

बम्बई ग्राम पंचायत अधिनियम, 1958 के अनुसार, ग्राम सभा में सरपंच और उप-सरपंच के चुनाव के लिए वही प्रक्रिया अपनाई जाती है जिसका सुझाव प्रस्तावित विधेयक में दिया गया है। महिलाओं और अनुसूचित जातियों और जन जातियों के लिए सीटों का आरक्षण भी होता है।

निहित सन्देह

वर्तमान प्रणाली में कमियों को देखते हुए और अनुच्छेद 40 में दर्शाये गए राज्य के नीति निर्देशक सिद्धान्तों, जिनका उद्देश्य पंचायतों को वे शक्तियां और अधिकार देना है जो स्वशासन की इकाइयों के रूप में कार्य करने के लिए उन्हें दिया जाना आवश्यक हो, को ध्यान में रखते हुए, निस्सन्देह विधेयक में पंचायतों के बारे में संविधान में एक नया भाग जोड़ने का प्रस्ताव है। लेकिन अभी भी ऐसे निम्नलिखित कुछ सन्देह हैं जिनको किसी व्यक्ति को कहने से रोका नहीं जा सकता:

1. विगत के अनुभव के आधार पर यह देखा गया है कि संस्थाओं का गठन केवल एक सीमा तक अपेक्षित है। जब कभी ऐसे संस्थाएं जन्म लेती हैं तो इससे सरकारी क्षेत्र में भ्रष्टाचार स्वतः ही बढ़ता है, अब यह स्वशासन की इकाइयों में भी फैलेगा। भारतीय परिप्रेक्ष्य में यह कहा जाता है कि अधिक शक्तियां देने का अर्थ है अधिक भ्रष्टाचार।

2. यह सही है कि अनुसूचित जातियों, जनजातियों और महिलाओं के लिए आरक्षण से पंचायत के सभी स्तरों में कमजोर वर्गों का प्रतिनिधित्व स्थापित होगा। लेकिन एक सार्थक प्रतिनिधित्व के लिए पंचायतों के चुने हुए सदस्यों के लिए कुछ न कुछ योग्यता निर्धारित करना अनिवार्य है, अन्यथा उनकी निरक्षरता उनके समुदाय को कोई लाभ नहीं दे सकेगी। वे पंचायतों की बैठकों में एक कठपुतली की तरह बैठेंगे और अध्यक्ष और अन्य समुदायों के प्रतिनिधियों का निर्णय लेने के बारे में पूरा नियंत्रण होगा।

3. खण्ड विकास अधिकारियों और प्रधानों के बीच सदैव कुछ न कुछ मतभेद रहा है। पंचायतों की बदलती हुई तस्वीर में प्रधान द्वारा स्थिति को और गम्भीर बना दिये जाने की सम्भावना है। ऐसी ही स्थिति गांव और जिला स्तर के सम्बन्धों के बीच भी उत्पन्न हो सकती है।

4. योजनाएं बनाने और उन्हें कार्यान्वित करने के लिए विशेषज्ञता की आवश्यकता होती है। एक बड़ा प्रश्न यह है कि पंचायतों को ऐसी तकनीकी जानकारी से किस हद तक सुसज्जित किया जाएगा। इस प्रकार की तकनीकी विशेषज्ञता का जिला स्तर पर योजनाएं बनाने में पहले से ही काफी अभाव है। सरकार और स्वशासन के बीच योजना बनाने और उन्हें अमल में लाने के उत्तरदायित्वों के बंटवारे में यह समस्या और भी विकट हो जाएगी। केन्द्र तथा राज्य स्तरों पर स्वशासन के संस्थानों की अनुपस्थिति से भी एक विभिन्न स्थिति उत्पन्न होगी।

5. सरकारी एजेन्सियों में आपस में और बैंकों तथा सरकारी एजेन्सियों के बीच तालमेल पहले ही एक समस्या है। एक योजना को कार्यान्वित करते समय यह समस्या और भी विकट हो जाएगी क्योंकि यह भूमिका जिला परिषदों द्वारा भी अदा की जाएगी।

6. यह प्रायः देखा गया है कि हमारे विकास कार्यक्रमों के लाभ निचले स्तरों तक नहीं पहुंचते। विकास निधियों का एक बड़ा भाग अधिकारियों द्वारा खा लिया जाता है। इस बात की क्या गारन्टी है कि सरपंच, उप-सरपंच, प्रधान और जिला प्रमुख ऐसे दुरूपयोगों में शामिल नहीं होंगे। पहले मामले में केवल सरकारी और बैंक अधिकारी ही ऐसे कामों में लगे हुए थे, अब इनमें इन संस्थाओं के अध्यक्ष भी शामिल हो जाएंगे।

7. एक राज्य का विधान मण्डल कानून बनाकर एक पंचायत को निधियां जुटाने के लिए कर, शुल्क चुंगी जैसे प्रभार लगाने और उन्हें वसूल करने के लिए प्राधिकृत कर सकता है और राज्य की समेकित निधि में से उन्हें अनुदान सहायता प्रदान कर सकता है लेकिन यह कार्य पंचायतें किस हद तक सही कर सकती हैं और राज्य इस सम्बन्ध में उनकी क्या सहायता कर सकता है। ये सभी गम्भीर मसले हैं। वर्तमान कानूनों में पहले ही बहुत-सी कमियां हैं जिनकी वजह से वे पूरी तरह प्रचलन में नहीं आये हैं। जब सरकार ही बहुत-से कानून बनाने में असफल रही है तो पंचायतें उस काम को सफलता से कैसे कर सकती हैं? और वे अपने ही समुदाय पर अधिक कर लगाने के विचार से कैसे सहमत हो सकती हैं? इसलिए इस बात पर विशेष ध्यान दिये जाने की आवश्यकता है कि लोगों पर करों का अत्याधिक भार न बढ़े ताकि सरपंचों और समुदाय के बीच अवांछित तनाव पैदा न हो और समुदाय अपने चुने हुए प्रतिनिधियों का समर्थन करने के बजाय उनका विरोध न करने लगे।

8. केन्द्र राज्य के सम्बन्ध प्रायः चर्चा का विषय रहा है।

पर्याप्त वित्तीय सहायता देने और पंचायतों के नियमित चुनाव कराने में राज्य सरकारों की विफलता ने अनेक बार समस्या को अधिक जटिल बनाया है। यदि पंचायतें अपेक्षित सीमा तक अपने संसाधन जुटाने में असफल हो जाती हैं तो वित्तीय सहायता के मामले में वें अधिकाधिक केन्द्र पर निर्भर होती चली जाएंगी। इससे केन्द्र को पंचायतों के तीनों स्तरों के साथ सीधे सम्पर्क स्थापित करने का अवसर मिलेगा। क्या वे राज्य जिनमें गैर-कांग्रेस-इ दलों की सरकारें हैं, इस बात को सहन करेंगी, यह एक चिन्ताजनक मामला है।

9. स्थानीय स्तर पर लोग अपने हितों को जानते हैं और अपनी समस्याओं को हल कर सकते हैं बशर्ते कि उन्हें साधन उपलब्ध कराये जाएं और राजनीति से दूर उन्हें अपनी स्वतन्त्र और निष्पक्ष पंचायतें चुनने का मौका दिया जाए। पंचायतों के चुनावों में चुनाव आयोग के हस्तक्षेप से पंचायतों में राजनीति का प्रवेश हो जाएगा।

10. पंचायतों के क्षेत्राधिकार और स्थानीय प्रशासकों के बारे में विशेष रूप से वित्तीय मामलों में भी समस्याएं सामने आएंगी। प्रणाली को सुदृढ़ आधार दिये जाने के बाद शीघ्र ही इन समस्याओं का समाधान भी खोजना होगा।

11. प्रधानमंत्रीजी के अनुसार हमारा प्रशासनिक ढांचा ऐसा है जिस पर भारी मात्रा में धन का दुरूपयोग होता है। प्रशासन के कुल खर्च में योजनाओं और कार्यक्रमों के कुल परिव्यय का अंश अनुपातिक दृष्टि से अधिक होता है। कई अन्य प्रकार से निधियों का दुरूपयोग होता है। लोग निस्सहाय होकर देखते रहते हैं और उनके प्रतिनिधि आवाज नहीं उठाते क्योंकि जो कुछ हो रहा होता है उस पर उनका नियंत्रण नहीं होता। लेकिन चूंकि विकास का उत्तरदायित्व उनका नहीं होता, इसलिए उन्हें इस बात की चिन्ता नहीं होती कि संसाधनों में रुकावटों के बारे में चिन्ता की जाए, काम को करवाने में कड़ी मेहनत की जाए और कामों का चयन किया जाए। इन सब तथ्यों को पंचायत कहां तक पूरा कर पायेंगी यह नहीं कहा जा सकता। आखिर व्यक्ति तो वहीं हैं चाहे वे सरकार में रहें या स्वशासन में। जब स्वशासन को विकास की सभी प्रकार की जिम्मेदारियां दे दी जाएंगी तो तीनों स्तरों पर सरकारी एजेन्सियों की भूमिका क्या होगी ? पंचायत में उनका समावेश किस प्रकार किया जाएगा? यह मानना कि किसी संगठन में समस्याएं बाहर के लोग उत्पन्न करते हैं तर्क संगत नहीं है। उसी समुदाय के लोग भी उतनी ही समस्याएं उत्पन्न करते हैं।

अन्त में यह कहना अनुचित न होगा कि स्वतन्त्रता से लेकर अब तक जो महत्वपूर्ण घटनाएं हुई हैं, जैसे रजवाड़ों का भारत संघ में विलय, 1950 में भारत को गणराज्य का दर्जा, जमींदारी प्रथा का उन्मूलन, पंचवर्षीय योजनाओं का शुभारम्भ, कांग्रेस का अवडी सम्मेलन, राज्यों का पुनर्गठन, बैंकों का राष्ट्रीयकरण, इसी के क्रम में यह विधेयक इतिहास में मील का एक नया पत्थर जोड़ेगा।

हालांकि संसद और राज्य विधान सभा स्तरों पर प्रजातन्त्र सुदृढ़ता से चल रहा है लेकिन यह बात पंचायती राज संस्थाओं के बारे में नहीं कही जा सकती। इसलिए पंचायती राज संस्थाओं में सुधार लाने के दो विकल्प दिखाई देते हैं। संविधान (चौंसठवें संशोधन) विधेयक, 1989 को लागू करने से पंचायतों के नियमित रूप से चुनाव कराना अनिवार्य हो जाएगा और उनके पास योजनाओं को अमल में लाने के लिए धनराशि की कमी नहीं होगी। लेकिन इस अधिनियम का सफल अनुपालन इस बात पर निर्भर करेगा कि राज्य इसका किस प्रकार उपयोग करते हैं और सरकार की आशाओं के अनुरूप तीनों स्तरों पर पंचायतें अपनी भूमिका निभाने में कहां तक सफल होती हैं।

अनुवाद : किरण गुप्ता
IV/1611, भोलानाथ नगर,
शाहदरा दिल्ली32

भारत के वास्तविक लोकतंत्र में इकाई गांव ही था। यदि एक भी गांव पंचायती राज, जिसे अंग्रेजी में "रिपब्लिक" कहा जाता था, की इच्छा करता था तो उसे कोई रोक नहीं सकता था। सच्चे लोकतंत्र को केन्द्र में बैठे बीस व्यक्ति नहीं चला सकते। इसे प्रत्येक गांव में निचले स्तर से लोगों द्वारा चलाया जा सकता है।

(गांधीजी, प्रार्थना सभा, नई दिल्ली) (6.1.1948)

ग्राम पंचायतों का स्वरूप कैसा ?

गिरीश माहेश्वरी

जिन राज्यों में आबादी के आधार पर ग्राम पंचायतों की सीमा निर्धारित की जाती रही हैं वहीं पर राजनैतिक परन्तु निरर्थक हस्तक्षेप में वृद्धि हुई है। जन असंतोष बढ़ता रहा है। विवादों ने जन्म लिया है। जन साधारण में शांति अस्थिर हुई है। वर्षों तक आपसी मन मुटाव बढ़ता रहा। अब समय आ गया है विवाद जैसे अनुत्पादक कार्य में शासन, प्रशासन एवं न्याय पालिकाओं के मूल्यवान समय को बरबाद न किया जाये। जन जीवन सामान्य सुखद और प्रेम की पारस्परिक भावना से ओत-प्रोत हो तो राष्ट्रीय एकता एवं अखंडता का दीप हमारे गणतंत्र को आलोकित करता रहेगा।

अतः प्रजातंत्र की नींव को सुदृढ़ करेगी — ग्राम पंचायत स्थायी कार्यालय की स्थापना और अधीनस्थ निश्चित कार्य क्षेत्र परन्तु अपरिवर्तनीय लगभग 3000 एकड़ (यानि 3 से 5 गांव) का क्षेत्रफल। आबादी चाहे हज़ार से नीचे ही क्यों न हो!

स्थायी ग्राम पंचायत

भारतीय गणतंत्र की महान उपलब्धि 'पंचायती राज परिकल्पना' जिसके माध्यम से राष्ट्र की सार्वभौमिक सत्ता का भार राष्ट्र के प्रत्येक वर्ग व प्रत्येक मानक क्षेत्र के कर्णधारों के कंधों पर गहन जिम्मेदारी के साथ सौंपने का संकल्प वर्तमान केन्द्रीय सरकार ने लिया है, स्वागत योग्य है, अभिनंदनीय है। राष्ट्र की विकास धारा में 'ग्राम पंचायत' मानक इकाई के रूप में विकसित करनी होगी। ग्राम पंचायतों के कार्यालय एक साथ स्थायी रूप से घोषित हों। लगभग समान क्षेत्रफल की ग्राम पंचायतें बनें। ग्राम पंचायत के विशेष पोषक एवं सहयोगी शासकीय कर्मचारी के रूप में 'पटवारी' एवं 'ग्राम-सेवक' हों। एक पंचायत सचिव भी हो तो ग्राम पंचायत की हर संभव देखरेख, रिकार्डों का समुचित रख रखाव सुदृढ़ एवं प्रगतिशील हो सकेगा।

इस संदर्भ में यदि ग्राम पंचायत का क्षेत्रफल लगभग 3000 एकड़ तक रखा जा सके, चाहे आबादी एक हजार से कम क्यों न हो तो भारत का विकास समयबद्ध संपन्न होगा अन्यथा झूठे आंकड़ों व दावों के कारण राष्ट्रीय स्तर पर भ्रमित होते रहेंगे। समग्र विकास की ओर अग्रसर होने में वर्षों का अन्तराल नष्ट होता रहेगा। और तो और विगत 40 वर्षों की उपलब्धियों के नामों-निशान ग्रामीण स्तर पर मिटते जा रहे हैं। वर्तमान में प्रति 5 वर्ष में ग्राम पंचायतों का परिसीमन एक बार आबादी के आधार पर किया जाता है। पुरानी ग्राम पंचायत टूटती हैं। नई ग्राम पंचायतों का जन्म होता है। स्थायी कार्यालय न बन सके हैं और भविष्य में बन भी नहीं सकते। रिकार्डों के अभाव में ग्रास रूट लेबल पर अवैधानिक गतिविधियों का जाल पुष्ट हो चुका है।

स्थायी ग्राम पंचायत कार्यालय की रूप रेखा

ग्राम पंचायत का भवन ठोस, सुदृढ़ एवं आधुनिकता की छाप लिये क्षेत्रीय भिन्न-भिन्न प्रकार के रिकार्डों के रख रखाव की दृष्टि से बहुत ही विश्वसनीय होना चाहिये, जिससे आगामी 100-150 वर्ष बाद भी पुराने इतिहास को देखा परखा जा सके।

कर्मचारी गण

1. सभी रेवेन्यू संबंधी रिकार्ड के रख रखाव, प्रगति मूलक भूमि का विवरण प्रति वर्षानुसार तैयार करने का दायित्व प्रति ग्राम पंचायत पर एक पटवारी की स्वतंत्र रूप से जिम्मेदारी होगी जिसकी कार्य शैली पर नियंत्रण ग्राम पंचायत का होगा। सप्ताह के प्रथम तीन दिन ग्राम पंचायत मुख्यालय में किसानों की समस्याओं के निराकरण हेतु उपलब्ध रहेंगे और शेष तीन दिन विभागीय बैठकों तथा दौरा कार्यक्रमों में व्यस्त रहेंगे।

2. कृषि एवं ग्रामीण विकास संबंधी सभी तकनीकी ज्ञान को अधिकृत रूप से कृषकों तक, ग्रामवासियों तक पहुंचाने एवं इन विषयों से संबंधित सभी समस्याओं को सुलझाने का समुचित प्रयास करने का दायित्व ग्राम सेवक को करना होगा। प्रति ग्राम पंचायत स्तर पर एक ग्राम सेवक की स्थापना हो, पटवारी की भांति नियमित रूप से सरपंच एवं ग्राम पंचों के निर्देशन में कार्य करेंगे।

3. पंचायत कार्यालय संचालन, बैठकों, सामाजिक कार्यों का सुपरविज़न, पेयजल समस्या निवारण, स्वास्थ्य संबंधी गतिविधियों पर नियंत्रण, शिक्षा, प्रौढ़ शिक्षा संबंधी

स्थायी ग्राम पंचायत कार्यालय

राष्ट्रीय विकास में मानक इकाई

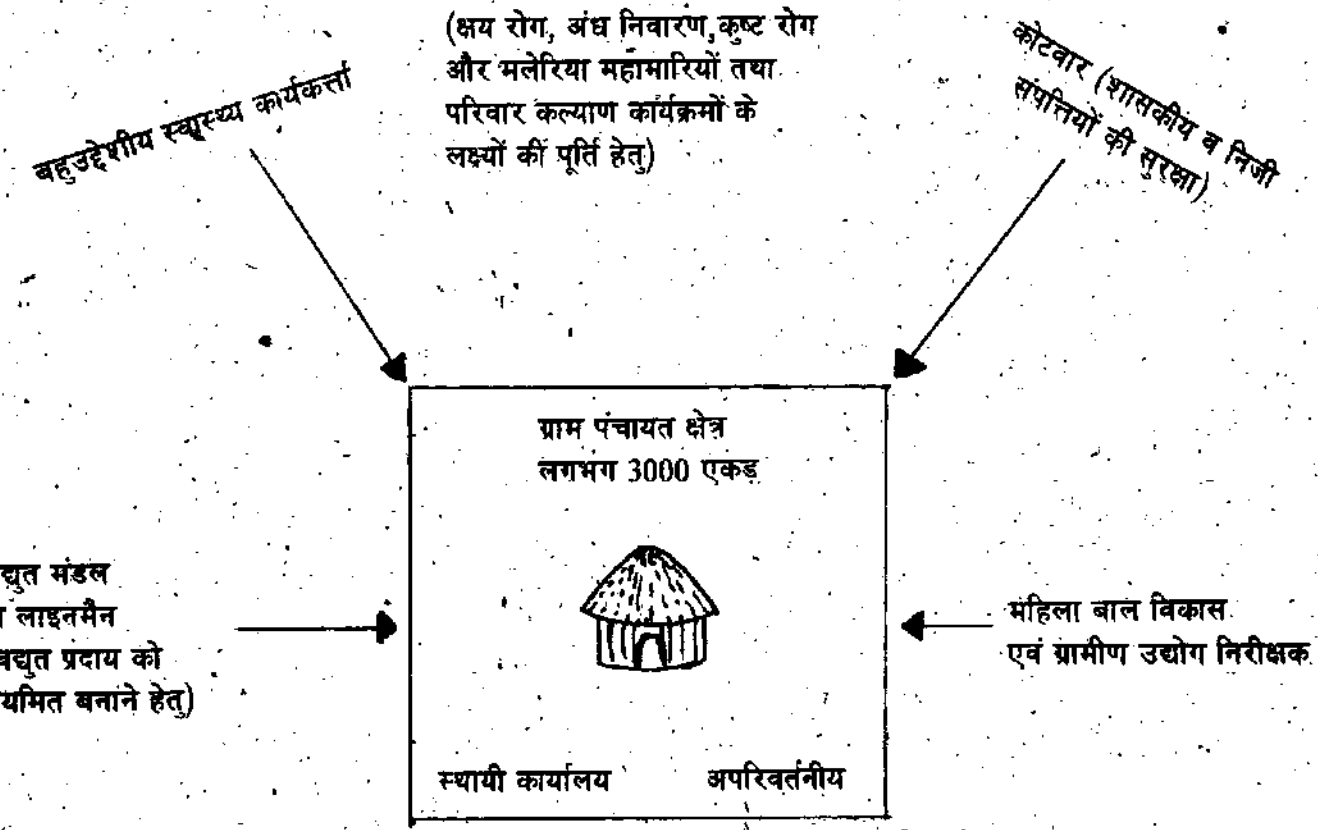

सभी शासकीय कर्मचारी सप्ताह के प्रथम तीन दिन मुख्यालय में उपलब्ध रहेंगे।

जानकारी प्राप्त करने तथा पंचायत क्षेत्र में राजस्व आय स्रोतों पर निगरानी रखने जैसे कार्यों में सरपंच व पंच गणों को समय-समय पर सहयोग प्रदान करने का दायित्व 'ग्राम पंचायत सचिव' का होगा।

3 हजार से अधिक आबादी की ग्राम पंचायत में एक स्वतंत्र सचिव नियुक्त किया जाये जबकि कम आबादी वाली ग्राम पंचायतों में एक सचिव एक से अधिक कार्यालयों का कार्यभार संपन्न करेगा।

4. स्वास्थ्य विभाग का बहुउद्देशीय कार्यकर्त्ता ग्राम पंचायत में नियमित परन्तु समयबद्ध रूप से आर्थिक सेवा प्रदान करेगा जिसको समय-समय पर पंचायत के निर्देशों का भी पालन करना होगा।

5. विद्युत मंडल के लाइन मैन पंचायत के अधीनस्थ क्षेत्र में पंचायत के निर्देशों का समय-समय पर आवश्यकतानुसार पालन करेंगे ताकि जनमानस की समस्याओं का निराकरण किया जा सके।

6. ग्रामीण स्तर के अन्य विभागीय कर्मचारियों को भी जिनका उल्लेख ऊपर नहीं किया गया है, ग्राम पंचायत की सहमति व निर्देशन के साथ संपन्न करेंगे।

7. राजपत्रित उच्चाधिकारियों एवं जन प्रतिनिधियों को क्षेत्रीय ग्रामीण दौरों के समय ग्राम पंचायत मुख्यालय में अपनी निरीक्षण टीप अंकित करनी होगी। पंचायत एवं अन्य कर्मचारियों को उचित सुझाव व निर्देशों को अंकित करना होगा। दौरा करने का उद्देश्य व उपलब्धियों का विवरण भी अंकित करना होगा। ग्राम पंचायत को समस्त कर्मचारियों की कार्यक्षमता का आंकलन करने की पात्रता होगी। इनकी क्षमता और दक्षता का विवरण विभागीय अधिकारियों को प्रेषित किया जायेगा। कर्मचारियों की प्रगति इन विवरणों के आधार पर निश्चित की जायेगी।

8. पंचायत अधीनस्थ क्षेत्र में शासकीय समस्त संपत्तियों की सुरक्षा तथा ग्रामवार प्रत्येक निवासी की संपत्ति की सुरक्षा ग्राम चौकीदार (कोटवार) द्वारा की जाती है। अतः इनको ग्राम पंचायत के निर्देशों का कड़ाई से पालन करना होगा। जन्म-मृत्यु पंजीयन का दायित्व पंचायत निर्वाह कर सकती है। कोटवार इस कार्य में सहयोगी सिद्ध हो सकते हैं।

कार्यालयों की साप्ताहिक गतिविधियां आवश्यक

अन्त में यह स्वीकार करना ही होगा कि नव भारत की संरचना में पटवारी, ग्राम सेवक, पंचायत सचिव; कोटवार की कितनी गंभीर परन्तु महत्वपूर्ण भूमिका है जिसके लिए उनके दायित्वों का पुनर्मूल्यांकन किया जाना अनिवार्य है। नये सिरे से इनको प्रशिक्षित किया जाना भी उतना अनिवार्य है। आवश्यकतानुसार इन कर्मचारियों के वृहद् कार्यक्षेत्र की समीक्षा हेतु हम सदैव तत्पर हैं। मंत्रियों, उच्चाधिकारियों की अनियमित बैठकों, दौरा कार्यक्रमों तथा उद्घाटन आदि आयोजनों से पूरा ग्रामीण इलाका प्रशासनिक दृष्टि से निर्जीव-सा प्रतीत हो रहा है। अतः साप्ताहिक कार्यालन गतिविधियों में सुधार लाया जा सकता है। राजधानी में मंत्रीगण अपने-अपने कार्यालयों में सप्ताह के प्रथम तीन दिन नियमित व संयमित रूप से कार्यों का निष्पादन करेंगे, इच्छुक जनता एवं प्रतिनिधियों से भेंट करेंगे। शेष तीन दिनों में ही बैठकों व प्रदेश व्यापी दौरों में व्यस्त रहेंगे। इनके ऐसा करने पर कार्यपालिकाओं प्रशासनिक अधिकारियों को कम से कम सप्ताह के 3 दिनों में विभागीय कार्यों का निबटारा करने में मदद मिलेगी। जिले, तहसील व विकास खंड स्तर पर तेजी से जनता अपनी-अपनी समस्याओं का निराकरण कराने में सक्षम होगी। उनका असंतोष दूर होगा। भ्रष्टाचार की बढ़ती सीमाएं समाप्त होंगी। गरीब व मध्यम वर्ग को राहत की सांस मिलेगी। न्याय सुलभ होगा। प्रशासन चुस्त होगा। पटवारी, ग्राम सेवक, पंचायत सचिव व अन्य ग्रामीण स्तरीय कर्मचारीगण विशेष तौर पर कोटवार सभी नियमित रूप से ग्राम पंचायत क्षेत्र में ग्रामीण जनता की सेवार्थ उपलब्ध रहेंगे। सप्ताह के अंतिम 3 दिन वृहस्पतिवार, शुक्रवार, शनिवार को पटवारी, ग्राम सेवक आदि (कोटवार के अतिरिक्त) सभी कर्मचारी विभागीय अधिकारियों के निर्देशन में ग्राम पंचायत से बाहर व्यस्त हो सकते हैं।

ग्राम कोटवार को ग्राम छोड़ कर बाहर नहीं जाना चाहिये। ग्राम में शासकीय संपत्तियों पर कड़ी निगरानी रखनी चाहिये। इस प्रकार ग्राम में अनुशासन की भावना प्रस्फुटित होगी। परिणामतः विकास की राह पर समुचा भारत तेजी से कदम पर कदम बढ़ायेगा। उपरोक्त मुद्दों पर केन्द्रीय सरकार का निर्देशन अनिवार्य है। समयबद्ध अनुशासित ढंग से निष्पादित कार्यक्रमों से ही राष्ट्रीय विकासधारा का प्रवाह गतिवान हो सकेगा।

238, कोतवाली वार्ड
जबलपुर, मध्यप्रदेश

पंचायती राज व्यवस्था के लिए संविधान संशोधन विधेयक

राकेश कुमार

लोक सभा के पिछले सत्र में प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी ने 64 वां संविधान संशोधन विधेयक प्रस्तुत किया था। यह विधेयक पंचायती राज विधेयक के नाम से भी जाना जाने लगा है। संसद के मानसून सत्र में इस विधेयक पर व्यापक बहस के बाद इसे पारित कर दिए जाने की सम्भावना है।

पंचायती राज व्यवस्था के पुनर्जागरण तथा स्थापना हेतु लाए गये इस विधेयक में कुछ ऐसे कानून बनाए जाने का प्रस्ताव है जिससे हमारे सामाजिक एवं राजनैतिक ढांचे में महत्वपूर्ण परिवर्तन होने की आशा है। श्री गांधी ने विधेयक प्रस्तुत करते हुए कहा था कि पंचायतें हमारी पुरानी संस्कृति की धरोहर हैं और उनके द्वारा हमारी परम्पराएं आने वाली पीढ़ी को सौंपी जा सकेंगी। उन्होंने इस बात पर विशेष बल देते हुए कहा, लोकतन्त्र को मजबूत करने के लिए पंचायतें महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती हैं तथा भारत जैसे बड़े देश में लोकतंत्र को सुचारू रूप से चलाने के लिए विधान सभा तथा लोक सभा के लिए चुने गये प्रतिनिधि ही पर्याप्त नहीं हैं; इसके लिए ग्राम स्तर पर भी लोगों का प्रतिनिधित्व होना आवश्यक है और इस प्रकार हम एक आदर्श लोकतन्त्र की स्थापना में सफल हो सकेंगे।

प्रस्तुत विधेयक में पंचायतों की तीन स्तर पर व्यवस्था का प्रस्ताव है। ग्राम पंचायत, मध्य स्तर की अथवा ब्लाक स्तर की पंचायत तथा जिला परिषद। इन पंचायतों के चुनाव भी विधान सभा तथा लोक सभा की तरह नियमित रूप से हर पांच वर्ष बाद होंगे। ग्राम पंचायतों के सरपंच, मध्य स्तर की अथवा ब्लाक स्तर की समितियों के सदस्य होंगे। यह समितियां तहसील अथवा मंडल स्तर पर भी हो सकती हैं तथा इन समितियों के सरपंच अथवा प्रधान जिला स्तर पर परिषदों के सदस्य होंगे। इस प्रकार की व्यवस्था से जन साधारण द्वारा चुने गये प्रतिनिधि उनकी पहुंच के अन्दर ही रहेंगे और उनसे सीधा संपर्क बनाए रखना आम आदमी के लिए कठिन नहीं होगा और न ही उन्हें अपनी समस्याओं को लेकर प्रदेश की राजधानियों अथवा दिल्ली की ओर भागना पड़ेगा।

विधान सभाओं तथा लोक सभा की तरह ही पंचायतों के चुनावों का कार्य, देखरेख तथा नियन्त्रण का कार्य भी चुनाव आयोग को सौंपा गया है। जिस प्रकार विधान सभाओं एवं लोक सभा के सदस्यों में अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों की व्यवस्था है उसी प्रकार इन जातियों एवं जनजातियों को पर्याप्त अथवा न्यायोचित प्रतिनिधित्व दिलाने के लिए जनसंख्या के आधार पर स्थानों के आरक्षण का प्रावधान इस विधेयक का महत्वपूर्ण अंग है। यदि किसी क्षेत्र में इन जातियों एवं जनजातियों के सदस्यों की संख्या आरक्षण के लिए निर्धारित जनसंख्या से कम है तो भी कम से कम एक स्थान इनके लिए आरक्षित रखा जाएगा। इन आरक्षणों की व्यवस्था का कार्य राज्य सरकारों द्वारा सुनिश्चित किया जाएगा। पहले इस प्रकार के आरक्षणों की व्यवस्था नहीं थी जिसके अभाव में इन जातियों एवं जनजातियों के कल्याणकारी कार्यों पर बहुत कम ध्यान दिया जाता था और कहीं तो अन्य जातियों द्वारा इनका शोषण होता रहता है। कुछ राज्यों द्वारा चलाई जा रही पंचायती राज व्यवस्थाओं में से अधिकांश में यह समस्या पाई जाती है जिसके उन्मूलन की व्यवस्था प्रस्तुत विधेयक में की गई है।

इस विधेयक में आरक्षण से सम्बंधित एक महत्वपूर्ण प्रावधान है महिलाओं के लिए आरक्षण का, जो वास्तव में हमारे राजनैतिक ढांचे में एक मूलभूत परिवर्तन होगा। सभी पंचायतों में महिलाओं के लिए तीस प्रतिशत स्थान आरक्षित होंगे। प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी ने अपना मत प्रकट करते हुए कहा कि देश के सम्पूर्ण विकास में महिलाओं का बहुत बड़ा योगदान रहा है अतः उन्हें उचित प्रतिनिधित्व मिलना

चाहिए। इस व्यवस्था से पंचायत जैसे संस्थानों द्वारा लिए जाने वाले महत्वपूर्ण निर्णयों तथा योजना आदि के कार्यों में महिलाओं को योगदान का पर्याप्त अवसर मिल सकेगा तथा ये संस्थान अधिक कुशलता एवं ईमानदारी से कार्य कर सकेंगे। श्री गांधी ने यह सम्भावना भी व्यक्त की है कि इस व्यवस्था से संस्थानों के अनावश्यक खर्चों को कम करने में सहायता मिल सकेगी। इन आरक्षणों की व्यवस्था कुछ इस प्रकार से की गई है कि अनुसूचित, जाति एवं जनजातियों की महिलाओं को भी प्रतिनिधित्व का अवसर मिल सके। जहां दो स्थान अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए आरक्षित होंगे वहां एक स्थान इन जातियों की महिलाओं के लिए आरक्षित किया जाएगा।

संविधान में इस विधेयक के माध्यम से इस प्रकार की व्यवस्था की जाएगी कि पंचायती राज व्यवस्था को प्रजातान्त्रिक ढांचे में वही दर्जा मिल सके जो राज्य स्तर पर विधान सभा तथा केन्द्रीय स्तर पर लोक सभा को प्राप्त है। राज्य तथा केन्द्रीय स्तर पर लोकतंत्र इसीलिए कायम है क्योंकि वहां चुनाव नियमित रूप से हो रहे हैं अतः देश की जड़ों अर्थात ग्राम स्तर पर भी लोकतन्त्र बनाए रखा जा सके, इसके लिए संविधान में संशोधन कर ग्राम स्तर पर नियमित रूप से चुनाव करवाने का कार्य चुनाव आयोग को दिया गया है। जहां कहीं पंचायत अपना निर्धारित कार्यकाल अर्थात पांच वर्ष पूरे न कर पाई वहां मध्यावधि चुनावों की व्यवस्था की जाएगी तथा इस प्रकार चुनी गई नई पंचायत भंग हुई पंचायत के शेष कार्यकाल को पूरा करेगी।

पंचायती राज विधेयक का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण अंग है हमारी योजना पद्धति में मूलभूत परिवर्तन। योजनाएं बनाने का जो कार्य अब तक केन्द्रीय तथा राज्य स्तर पर होता रहा है उससे यह लगने लगा है कि इस प्रकार की व्यवस्था से किसी क्षेत्र विशेष की समस्याओं अथवा आवश्यकताओं के विषय में पर्याप्त जानकारी के अभाव में ही योजना बनाने का कार्य किया जा रहा है। इसके अतिरिक्त हमारी अन्य प्रशासनिक व्यवस्थाएं कुछ इस प्रकार की हैं कि क्षेत्र विशेष को न तो योजनाओं का पर्याप्त लाभ मिल पाता है और न ही उन क्षेत्रों का वांछित विकास हो पाता है। अतः इन सब समस्याओं के समाधान हेतु विधेयक में इस प्रकार की व्यवस्था की गई है कि ग्राम स्तर पर ही पंचायतों द्वारा अपनी समस्याओं को हल करने के लिए तथा अपने क्षेत्र में विकास कार्यों के लिए योजनाएं बनाई जाएं जिन्हें ब्लाक तथा ज़िला स्तर की पंचायतों में प्रस्तुत किया जाए जो राज्य तथा केन्द्र सरकार से विचार विमर्श के बाद आवश्यक एवं सुचारू रूप से लागू की जा सकें। ये योजनाएं राज्य सरकारों द्वारा निर्धारित नीतियों को आधार मान कर ही बनाई जाएंगी। प्रधानमंत्री ने अपने वक्तव्य में यह भी स्पष्ट कर दिया है कि केन्द्र सरकार का ज़िला स्तर की योजनाओं में कोई हस्तक्षेप नहीं होगा और यह राज्य सरकार का उत्तरदायित्व होगा कि वह यह देखे की कौन-सी योजना क्षेत्र विशेष के हित में है और कौन-सी नहीं। इस प्रकार पंचायतों को यह सुविधा रहेगी कि वे अपने क्षेत्र की विभिन्न समस्याओं के समाधान तथा अपने क्षेत्र के विकास कार्यों के लिए योजनाएं बना सकें। इन व्यवस्था से देश के विकास कार्यों का उत्तरदायित्व पंचायतों पर आ जाएगा और जन साधारण को अपनी समस्याओं को लेकर दौड़ भाग नहीं करनी पड़ेगी।

इस विधेयक में पंचायतों के कार्य क्षेत्र का निर्धारण भी किया गया है। विधेयक में 29 विषयों की एक सूची दी गई है जिसमें कृषि, भूमि सुधार, लघु उद्योग, कुटीर उद्योग, खादी, ग्रामोद्योग, पेय जल, सिचाई योजना, संचार साधन, ग्रामीण विद्युतीकरण, गरीबी उन्मूलन, गैर परम्परागत ऊर्जा स्रोत, शिक्षा, सांस्कृतिक कार्यक्रमों, तकनीकी प्रशिक्षण समाज एवं परिवार कल्याण, स्वास्थ्य एवं आवास सुविधाएं, ईंधन, चारा तथा सड़क निर्माण जैसे विषयों को शामिल किया गया है। पंचायतों का कर्तव्य होगा कि वे अपने क्षेत्र में समस्याओं का अध्ययन करें तथा उनके समाधान की व्यवस्था करें।

इन बड़ी जिम्मेदारियों को निभाने के लिए, प्रस्तुत विधेयक में पंचायतों को साधन अथवा धनराशि उपलब्ध करवाने का प्रावधान भी रखा गया है। सरकार का इरादा है कि जवाहर रोजगार योजना के लिए निर्धारित 27 सौ करोड़ रुपये की राशि, जो गरीबी उन्मूलन के लिए खर्च की जाएगी, का लगभग 80% इन्हीं पंचायतों को दिया जाये जो इस धनराशि के सदुपयोग को सुनिश्चित करेगी तथा ग्राम स्तर पर जरूरतमंद लोगों की पहचान हो सकेगी। पंचायतों के लिए धनराशि जुटाने का कार्य राज्यों द्वारा नियुक्त वित्त आयोग द्वारा सम्पन्न किया जाएगा। वित्त आयोग यह निर्णय लेगा कि किस पंचायत को कितनी राशि दी जाए। यह राशि प्राथमिकता वाले क्षेत्रों तथा अन्य विकास योजनाओं के लिए, क्षेत्रीय साधनों, राज्य सरकारों तथा आवश्यकतानुसार

केन्द्रीय सरकार द्वारा जुटाई जाने की व्यवस्था की गई है।

प्रधानमंत्री ने यह भी स्पष्ट किया है कि इस विधेयक से राज्य सरकारों के अधिकारों का किसी प्रकार का हनन नहीं होगा बल्कि राज्य सरकारों के, पंचायती राज व्यवस्था स्थापित करने के जिन अधिकारों का प्रावधान संविधान में नहीं था उसे इस विधेयक के माध्यम से राज्य सरकारों को सौंपा जा रहा है। अब कानून बनाकर पंचायत के चुनावों, अधिकारों, कर्तव्यों तथा धनराशि आदि की व्यवस्था की जाएगी।

इस विधेयक का मुख्य उद्देश्य ग्राम स्वराज अर्थात आदर्श लोकतन्त्र की स्थापना करना है। पंचायती राज व्यवस्था की स्थापना इस उद्देश्य की पूर्ति में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। इस प्रणाली के माध्यम से जन साधारण के प्रतिनिधि अधिक संख्या में उपलब्ध होंगे तथा इन लोक सेवकों द्वारा अपने-अपने क्षेत्र में कुशलतापूर्वक कार्य करना सम्भव हो पायेगा क्योंकि ये क्षेत्र आजकल चुने हुए प्रतिनिधियों के क्षेत्रों से अपेक्षाकृत बहुत सीमित होंगे।

इस विधेयक में एक प्रावधान के अन्तर्गत उत्तर पूर्वी राज्यों, नगालैण्ड, मेघालय तथा मिजोरम को प्रस्तावित व्यवस्था से अलग रखा गया है क्योंकि वहां पंचायती राज व्यवस्था के समान ही स्वराज की पारम्परिक प्रणालियां प्रचलित हैं तथा इन प्रणालियों की समुचित सुरक्षा का प्रबन्ध आवश्यक है।

इसी प्रकार संविधान के छठे अनुच्छेद के अनुसार स्थापित व्यवस्थाओं पर भी विधेयक लागू नहीं होगा। इसी आधार पर मणिपुर क्षेत्र की जिला परिषद तथा दार्जिलिंग जिले की गोरखा हिल परिषद के क्षेत्रों को भी इस विधेयक की कार्य सीमा के बाहर रखा गया है।

वर्तमान व्यवस्था में ऐसी बहुत-सी कमजोरियां हैं जिनके कारण जन साधारण के लिए अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति, अपनी समस्याओं के समाधान तथा अपने विकास के लिए योजना बनाना तथा कोई निर्णय लेना कठिन था। इस विधेयक के माध्यम से ऐसे कानून बनाए जाएंगे जिससे लोग स्वयं को स्वतंत्र अनुभव कर सकें, अपने जीवन से सम्बंधित मामलों पर सोच विचार कर सकें तथा उचित निर्णय ले सकें। बहुत समय से इस प्रकार की व्यवस्था की स्थापना करने की आवश्यकता को महसूस किया जा रहा था। प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी ने संविधान में 64 वें संशोधन विधेयक को संसद में प्रस्तुत करके देश के राजनैतिक एवं सामाजिक ढांचे को आवश्यकता के अनुरूप परिवर्तित करने का एक ऐतिहासिक कदम उठाया है।

इस विधेयक के पारित हो जाने के बाद पंचायतों की कानूनी रूप से स्थापना हो जाएगी जिसमें आरक्षण व्यवस्था के होने से समाज के हर वर्ग का व्यक्ति तथा महिला मिल जुल कर देश के विकास में सहयोग दे सकेंगी। इस प्रकार गांधीजी का 'ग्राम स्वराज-पूर्ण स्वराज' का सपना साकार होने की सम्भावना है तथा यह आशा की जा सकती है कि हम एक आदर्श लोकतन्त्र की स्थापना करने में सफल होंगे।

कार्मिक विभाग,
भारतीय स्टेट बैंक
स्थानीय प्रधान कार्यालय,
11 संसद मार्ग,
नई दिल्ली–110001

आपको आपसी सहयोग से काम करना चाहिए। राजनीतिक जीवन में हर एक के पास वोट का अधिकार है, आर्थिक मामलों में हर एक को बराबर मौका है, हमारी पंचायतों में सभी को बराबर माना जाना चाहिए, स्त्री और पुरुष, ऊंचे तथा नीचे का कोई भेदभाव नहीं होना चाहिए। हमें एकता और भाई चारे की भावना तथा अपने काम में और खुद में विश्वास के साथ आगे बढ़ना चाहिए।

(जवाहरलाल नेहरू, जयपुर, राजस्थान में 2 अक्तूबर, 1959 को भाषण)

एक अभिनव प्रयोग है—पंचायती राज व्यवस्था

दिलीप कुमार

भारतीय संदर्भों में पंचायती राज्य व्यवस्था कोई नई बात नहीं है। इतिहास गवाह है कि 'मौर्य' और 'गुप्त' काल में अनेक गांवों में लोकसत्तात्मक व्यवस्था मौजूद थी। अंग्रेजी शासन काल में भी 'भारत कौंसिल' और 'भारत सरकार'- कानूनों के जरिये ग्राम पंचायतों की पुनर्स्थापना के प्रयास हुये थे।

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी आधुनिक भारत में ग्राम स्वराज्य के लिए गांव पंचायत के सबसे बड़े पैरोकार थे। दिसम्बर, 1946 में उन्होंने कहा था, "स्वतंत्रता की शुरूआत धरातल से होनी चाहिए। इसलिए मैं चाहता हूं कि हर गांव एक पूर्ण सम्पन्न गणतंत्र हो, वह आत्मनिर्भर हो और स्वशासित हो।" गांधीजी की इस विचारधारा को पंडित जवाहरलाल नेहरू ने गम्भीरता से समझा। वह मानते थे कि गांवों के विकास और ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूत किये बिना इस देश का सही अर्थों में विकास नहीं हो सकेगा। इसका एक कारण यह भी है कि भारत एक कृषि प्रधान देश है और इसकी लगभग 70 प्रतिशत आबादी गांवों में रहती है। इस संकल्प को पूरा करने के लिए जो व्यवस्था वह अपनाना चाहते थे उसे उन्होंने पंचायती राज व्यवस्था का नाम दिया।

महात्मा गांधी व पंडित जवाहरलाल नेहरू से लेकर राजीव गांधी तक का सफर करने के बाद 64वें संविधान संशोधन के जरिये व्यावहारिक धरातल का पहला पड़ाव छूने वाली पंचायती राज व्यवस्था आखिर है क्या ? आज के सन्दर्भों में इसकी प्रासंगिता और सार्थकता कितनी है ? इसके लागू करने का वास्तविक उद्देश्य क्या है ? ऐसे तरह-तरह के सवाल उठते हैं।

दरअसल प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी ने पंचायती राज व्यवस्था को लागू करने का मन अपने निवास पर होने वाले जन-सम्पर्क कार्यक्रमों में जनता से मिलकर उसकी परेशानियां सुनकर बना। यों तो उन्होंने 1985 में अपने पहले भाषण में ही पंचायती राज व्यवस्था की बात उठायी थी। मगर जन-सम्पर्क कार्यक्रम में गांव की नाली, सड़क, बिजली, नहर, महिला उत्पीड़न और अनेक छोटी-मोटी समस्याओं की फरियाद दिल्ली पहुंचते देखकर उन्होंने इस पर गम्भीरता से विचार किया। इस दृष्टि से उन्होंने पहला महत्वपूर्ण कदम 10 दिसम्बर, 1987 को उठाया। इस दिन भोपाल में संवेदनशील प्रशासन विषय पर जिला मजिस्ट्रेटों तथा कलैक्ट्रों की कार्यशाला में उन्होंने इस सम्बन्ध, में खुलकर चर्चा की। अगली कड़ी के रूप में 13 फरवरी 88 को हैदराबाद, 2 अप्रैल, 88 इम्फाल, 30 अप्रैल जयपुर और 18 जून को कोयम्बतूर में जिला मजिस्ट्रटों, कलैक्ट्रों से उन्होंने बातचीत की।

इन बैठकों के बाद श्री राजीव गांधी ने अपनी जन सभाओं में पंचायती राज का सवाल उठाना शुरू किया। विपक्ष ने इसको गम्भीरता से नहीं लिया। मगर प्रधानमंत्री राजीव गांधी, महात्मा गांधी और पंडित नेहरू के ग्राम स्वराज्य और गांवों की स्वायत्ता के स्वप्न को अमलीजामा पहनाने के लिए दृढ़ संकल्प थे। इसीलिए 10 मई को दिल्ली के सीरीफोर्ट सभागार में कांग्रेस के विशेष अधिवेशन में पंचायती राज व्यवस्था लागू करने के लिए सर्वसम्मति से प्रस्ताव पारित करने से पूर्व वे दो महत्वपूर्ण काम पूरे कर चुके थे। एक तो जवाहर रोजगार योजना में गरीबी रेखा से नीचे बसर कर रही ग्रामीण जनसंख्या के लिए 2700 करोड़ रुपये का आबंटन। दूसरे 1 अप्रैल 89 से प्रत्येक गांव के लिए ग्राम ऋण योजना और हर गांव को एक न एक बैंक से जोड़ना। यह दोनों योजनायें पंचायती राज व्यवस्था को अमलीजामा पहनाने से पूर्व लागू करना सरकार की गम्भीरता का एहसास कराती है। वास्तव में सच तो यह है कि जवाहर रोजगार जैसी महत्वाकांक्षी योजनायें गांवों की स्वायत्तशासी स्थिति के बिना पूरी तरह लागू नहीं हो सकती। मगर गांवों को स्वायत्तशासी स्थितियां देने से पहले एक आर्थिक योजना की प्रक्रिया की शुरूआत भी जरूरी है।

इस सम्बन्ध में संसद में विधेयक प्रस्तुत करते हुए प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी ने पंचायती संस्थाओं को लोकतंत्र की बुनियाद बताते हुए सामाजिक आर्थिक परिवर्तन का महत्वपूर्ण माध्यम यूं ही नहीं बता दिया है। उन्हें इस बात का ऐहसास था कि पंचायती राज व्यवस्था को कारगर

बनाने के लिए पंचायतों के लिए आर्थिक व्यवस्था का प्राविधान करना जरूरी है। इसीलिए प्रस्तुत विधेयक में प्रस्ताव है कि ऐसा वित्त आयोग बनाया जाये जो राज्य सरकारों और विधान सभाओं को सिफारिश करेगा कि वे कितना टैक्स पंचायतों को सौंपे और कितना अनुदान उन्हें दें। हालांकि विधेयक में राज्य सरकारों को यह अधिकार दिया है कि वे तय करें कि टैक्स की आमदनी का कितना हिस्सा पंचायतें रख सकती हैं, कितना उन्हें सौंपा जा सकता है और राज्य की संचित निधि से उन्हें कितना अनुदान दिया जा सकता है।

पंचायती राज की दूसरी महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि इसमें महिलाओं की भागेदारी बहुत आवश्यक बतायी गयी है। महिलायें जो कुल आबादी का लगभग आधा हिस्सा हैं उनके लिए लोकतांत्रिक प्रक्रिया में स्वतंत्र हैं। इस तरह का कदम समतावादी समाज तथा महिलाओं के विकासात्मक आर्थिक, सामाजिक कारणों से पंचायती राज संस्थानों में महिलाओं की भागीदारी संतोषजनक नहीं रही। कर्नाटक, महाराष्ट्र, गुजरात और पंजाब आदि कुछ राज्यों को छोड़कर किसी भी राज्य में ग्राम पंचायत स्तर पर महिलाओं का प्रतिनिधित्व या तो है ही नहीं यदि है तो न के बराबर। इस कमी को नामजदगी के जरियें पूरा करने की कोशिश की गयी। मगर नामजदगी और सीधे चुनकर आने की प्रक्रिया में बहुत अन्तर है। दोनों प्रक्रियाओं से चुने प्रतिनिधियों के आत्मविश्वास और कार्यशैली में काफी फर्क होता है।

पंचायती राज व्यवस्था को मजबूत करने के लिए श्री गांधी ने पंचायत से जिला परिषद, नगर-पालिका स्तर तक महिलाओं के लिए 30 प्रतिशत आरक्षण का प्रावधान रखने की घोषणा की है। इसको प्रभावी ढंग से लागू करने के लिए तथा महिलाओं को वास्तव में अधिकार देने की दृष्टि से सरकार ने राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य योजना (1980-2000) बनायी है। इसकी सबसे महत्वपूर्ण सिफारिश यह है कि निचले स्तर पर कार्यरत सभी कर्मचारियों में 50 प्रतिशत महिला होनी चाहिए। इस लक्ष्य को पूरा करने के लिए न्यूनतम शैक्षणिक योग्यताओं में छूट देने की भी सिफारिश है। इस योजना पंचायतों की सभी महिला सदस्यों के लिए उचित प्रशिक्षण देने की आवश्यकता का भी सुझाव दिया गया है जिससे वे पर्याप्त रूप से अपने अधिकारों का उपयोग कर सकें।

इस तरह गांवों में पंचायती राज व्यवस्था लागू करने का सीधा मतलब यह है कि जिन छोटे-मोटे कामों के लिए गांव के लोगों को दिल्ली तक भटकने के लिए मजबूर होना पड़ता था, अब वह काम पंचायतों के जरिये पूरे करा सकेंगे। गांवों के गरीब किसान मजदूरों को व्यर्थ की भटकाव की त्रासद यातना झेलने से राहत मिलेगी। मगर इसके साथ ही उनके ऊपर भी जागरूकता और अपने अधिकारों व कर्तव्यों के बोध का दायित्व भी आयेगा।

पंचायती राज व्यवस्था के साथ-साथ श्री राजीव गांधी यह भी चाहते हैं कि शहरी क्षेत्रों में रहने वाले नागरिकों के लिए भी कुछ इसी तरह की सक्रिय और जीवंत व्यवस्था लागू की जाये। 23 मई को अपने निवास पर मिलने आये सभी पुरुषों को सम्बोधित करते हुए श्री गांधी ने इस सम्बन्ध में भी विधेयक शीघ्र ही लाने की बात कही है।

सरकार के इन प्रयासों का सीधा अर्थ यही है कि वह प्रशासकीय व्यवस्था और लालफीताशाही की जटिलता से भलीभांति अवगत हो गयी है। इस कमी को दूर करने के लिए ही वह प्रशासनिक व्यवस्था के विनियंत्रीकरण के जरिये सरलीकरण का रास्ता अपना रही है। यह एक अति महत्वाकांक्षी प्रयोग है। लेकिन इसकी सफलता की जिम्मेदारी जितनी सरकार पर है उतनी ही जागरूक नागरिकों की। ताली बजाने के लिए जरूरत दोनों हाथों की पड़ेगी। यह तो समय ही बतायेगा अपनी-अपनी भूमिका में कौन कितना खरा उतरा। हां सरकार ने पंचायती राज व्यवस्था लागू करने की पहल करके अपनी गम्भीरता का एहसास जरूर करा दिया है।

सी–16, प्रेस इन्क्लेव
साकेत, नई दिल्ली 17

पंचायत शब्द में एक प्राचीन भावना जुड़ी हुई है। यह एक अच्छा शब्द है। इसका शाब्दिक अर्थ है — गांव के पांच चुने हुए व्यक्तियों की सभा। यह उस प्रणाली का प्रतिनिधित्व करता है जिसमें भारत के असंख्य गणराज्यों का प्रशासन होता था परन्तु ब्रिटिश सरकार ने लगान वसूली के अपने क्रूर तरीके अपना कर इस प्राचीन गण-व्यवस्था को लगभग नष्ट कर दिया।

गांधीजी, यंग इंडिया, 28.5.31

वादी प्रतिवादी

दुर्गेश

पेशकार परमाराम की नजरें बहुत देर से सामने दीवार पर टंगे कलेन्डर पर स्थिर थीं। आज उनकी पेशकारी और नौकरी का आखिरी दिन था। अगले दिन से तो वह रिटायर हो रहे थे, वह काफी देर तक ध्यान-मग्न होकर कलेन्डर को ताकते रहे और मन ही मन कुछ सोचते रहे। फिर उन्होंने सामने रखी आज की पेशी की मिसलें संभाली। बस आज-आज ही तो उनको पेशी करवानी थी। कल से तो वह इस नौकरी-चाकरी से निकाले ही जायेंगे। सभी जिम्मेवारी और हुक्म-आर्डर से मुक्त। लेकिन पहली मिसल 'बिड़दाराम बनाम भजना, बांचते ही वह अचरज से चौंक गये। यह उनका बहुत ही जाना-पहचाना नाम था। पूरे दस वर्ष इस नाम की मिसलें उनके हाथों में होकर निकली हैं। बिड़दाराम से उनका अच्छा परिचय था।

इस मिसल के सामने आते ही परमाराम को ध्यान आया कि चौंतीस-पैंतीस वर्ष पहले जब वह सरकारी सेवा में आये थे तब इसी कमरे के सामने वाली सीट पर बैठते थे। अभी उनकी नौकरी लगे कुछ ही दिन हुए थे कि उस दिन एक आदमी उतावल करता-सा आया और उनकी टेबल पर नकल की दरख्वास्त रखकर बोला, "बाबूजी, यह नकल आज ही तैयार करनी पड़ेगी। बहुत जरूरी काम है। मुझे कल की तारीख में हाई कोर्ट पहुंचना है। वैसे कोर्ट-कचहरी के कामों के लिए मैं नया नहीं हूं। यहां तो मुझे इकांतरे-दुकांतरे आना ही पड़ता है। चाहे जैसे भी हो, यह नकल मिलने पर ही आगे का काम पेश पड़ेगा। आप तो जानते ही हैं वह हाई कोर्ट है। वहां तो कागजों का पेटा पूरा करके ही पहुंचना चाहिए।"

केस-मुकदमों की भी बहुत-सी बातें वह बताता रहा। न्यायालय के नियम कानूनों के बारे में उसके ज्ञान, स्थिति की जानकारी और वार-तिथियों की उसकी स्मृति से परमाराम बहुत प्रभावित हुआ और समय पर उसका काम कर दिया।

उस दिन के बाद तो बिड़दाराम से परमाराम का परिचय बढ़ता ही गया। वह किसी न किसी काम से सप्ताह में तीन-चार बार कोर्ट आता और परमाराम के साथ तरह-तरह की चर्चा करता रहता।

बिड़दाराम की बातों से परमाराम को पता चला कि यहां की सभी अदालतों में और हाई कोर्ट में बिड़दाराम के कोई बीस-तीस मामले चल रहे हैं। लेकिन बहुत से मुकदमें तो ऐसे हैं जिनका कोई खास महत्व नहीं है। कई मामले आपसी बातचीत से सहज ही निबट सकते हैं। पर फिर भी बिड़दाराम मुकदमे पर मुकदमा करता रहता है। दो वादों का निर्णय होता है तो तीन और शुरू हो जाते।

एक दिन परमाराम बिड़दाराम को समझाते हुए बोला- "अगर मुकदमा-मामला करना कोई बहुत जरूरी हो तो अलग बात है नहीं तो इतने मामले अच्छी बात नहीं है। इन से धन-सम्पति और समय सब कुछ बर्बाद हो जाते हैं और फिर आपके तो बहुत से मामले ऐसे ही हैं जो परस्पर विचार-विमर्श के पश्चात आसानी से तय हो सकते हैं। इसलिए उचित यही है कि जितनी जल्दी हो सके इन मुकदमों को निबटा लें। इसी में भलाई है नहीं तो घर नुकसान और जग हंसाई होगी।"

परमाराम की सीख सुनकर बिड़दाराम आश्चर्य से बोला- "बाबूजी, ये आप कैसी बातें कर रहे हैं? अगर बातों से ही सलटेवा हो जाये तो फिर कोर्ट-कचहरी किस लिए बने हैं? काश्तकार के मुकदमें-मामलें तो लगे ही रहने चाहिए। आपने वह कहावत तो सुनी होगी कि 'जर, जमीन जोर की, जोर गये और की, इसलिए मुकदमें तो चालू ही रखने पड़ेंगे। अगर चुपचाप बैठ जाऊंगा तो लोग यही समझेंगे कि इसके तो अब हाथ थक गये हैं। लेकिन मैं लोगों को यह बात सोचने का मौका नहीं दूंगा। वैसे अपने पास जमीन-जायदाद की कोई कमी नहीं है। खेत, नोहरे, बाड़े बहुत हैं। फिर मैं लोगों से हार क्यों मान लूं। कोई एक मुकदमा करेगा तो मैं दो करुंगा। लेकिन हार अगला ही मानेगा।"

बस बिड़दाराम से परमाराम की ऐसी ही बातें होती रहती थीं। मुकदमा उठाना और सलाह-मशविरा करके मामले निबटाने के काम को बिड़दाराम बहुत पोचा काम

समझता था। समझौता और राजीनाम उसकी समझ में आधी हार थे।

हाथ में एक बड़ा-सा थैला और दो-तीन मोटी-मोटी कानून की पुस्तकें लिए वह नित-हमेशा कोर्ट-कचहरी में ही फिरता नजर आता। वकील, पेशकार, बाबू, पटवारी, गिरदावर, सिपाही और जमादार से उसकी बतलावण चलती ही रहती। सप्ताह के सारे दिन वह बयान, रिकार्ड मुआयना, नकल और तारीख पेशी लेने में ही लगा देता। जान पहचान वाले उसे टोकते कि 'अब तो बुढ़ापा आ गया है इन मुकदमों-मामलों से मुक्ति पा लेनी चाहिए।' लेकिन वह हंसकर टाल देता।

मिसल, सम्मन, पेशी, तलवाना, दावा, अपील, शपथपत्र और जिरह बहस ही उसके आदरजोग शब्द बन गये। बिड़दाराम हाजर-हो की आवाज ही जैसे उसकी उपासना बन गई हो व मुकदमों की नई से नई जानकारी ही उसकी भक्ति बनी हुई थी। कोर्ट खुलने से पूर्व ही बिड़दाराम थैला एक ओर धरे बैंच पर बैठा काश्तकारी अधिनियम की पोथी पढ़ता रहता था। लेकिन ये बातें तो बहुत पुरानी हैं। लगभग दस वर्ष तक इस कोर्ट में काम करने के बाद एक दिन परमाराम की बदली दूसरी जगह हो गई। और धीरे-धीरे वह बिड़दाराम को एकदम भूल गया। फिर तो उसका ट्रान्सफर एक स्थान से दूसरे स्थान पर होता रहा। समय सरकता गया और परमाराम बाबू से पेशकार हो गया और रिटायर होने के समय ठीक उसी जगह पर उसकी पुनः बदली हो गई जहां वह सर्वप्रथम नौकरी लगा था।

परमाराम के हाथ में अब भी बिड़दाराम बनाम भजना की वही मिसल थी। अब बिड़दाराम की सभी बातें उसके ध्यान में आने लगीं। उसने सोचा तो क्या बिड़दाराम अब तक मुकदमे बाजी में फंसा हुआ है। मैं इतने साल की नौकरी करने के पश्चात कल से रिटायर हो रहा हूं। लेकिन बिड़दाराम के मुकदमे अब भी अदालतों में चल रहे हैं। यह तो बहुत आश्चर्य की बात है। पेशकारजी बिड़दाराम की वह मिसल देखते हुए न जाने क्या-क्या सोचते रहे।

उसी समय लाठी के ठेगे से चलता एक डोकरा आया और पेशकारजी के सामने खड़ा होकर उनकी मेज पर राजीनामे की एक दरख्वास्त रखी। पेशकारजी ने दरख्वास्त में लिखा नाम पढ़ा-बिड़दाराम बनाम भजना। परमाराम ने अचंभे से उस बूढ़े की ओर देखा वह बिड़दाराम ही था।

पुराने परिचय की बातें बताकर पेशकारजी ने बिड़दाराम से पूछा-"आज राजीनामें की अर्जी कैसे पेश कर रहे हो?"

बिड़दाराम बैंच पर बैठकर बोला-"क्या बताऊं पेशकारजी, आप उस समय भी मुझे बहुत समझाते थे कि जहां तक हो सके मुकदमें-मामलों से दूर ही रहना चाहिए। लेकिन मेरे तो मुकदमेबाजी की ऐसी छिन्न चढ़ी कि मैं जीवन भर मुकदमे ही लड़ता रहा। आप तो जानते ही हैं, केस-मुकदमों में कैसे धन लगता है। इन केस-मामलों में मेरा बहुत कुछ बिक गया। और अब भी एक मामला चल रहा है। अब इसी मामले को निबटाने के लिए यह राजीनामा पेश कर रहा हूं। वादी-प्रतिवादी के रूप में अदालतों के चक्कर लगाकर मैंने तो यही अनुभव किया कि व्यर्थ की मुकदमेबाजी से समझौता ही उचित रहता है....।

पेशकारजी उसकी बातें ध्यान से सुनते हुए राजीनामे का प्रार्थनापत्र मिसल में लगाने लगे।

महाराज होटल
चूरू (राजस्थान)

प्राचीन काल से ही हमारे गांव प्रशासन की बुनियादी इकाई रहे हैं और वे ही हमारे लोगों की उन्नति में एक बड़ा हाथ बंटा सकते हैं। हमने ग्राम पंचायतों को एक मजबूत बुनियाद पर खड़ा करने की कोशिश की है और यह भी कोशिश की है कि वे प्रशासन की एक सक्रिय इकाई के रूप में कार्य करें। उनको गांव के लोगों के कल्याण से संबन्धित अधिकांश कार्य इसीलिए सौंपे गए हैं।

इन्दिरा गांधी

पहले बुनियादी सुधार लागू हों

भरत डोगरा

पंचायती राज के बारे में 64वां (संशोधन) विधेयक, 1989 पर रचनात्मक और नकारात्मक दोनों ही प्रकार की उग्र प्रतिक्रियाएं हुई हैं। कुछ लोगों ने इस से बहुत ऊंची आशाएं लगा ली हैं तो कुछ लोग इसका बहुत ही निराशाजनक चित्र बनाए बैठे हैं। इन परस्पर विरोधी प्रतिक्रियाओं के रेले के बीच बहुत से लोग इस मुद्दे पर उलझ कर रह जाएंगे।

हां, कुछ उलझनें स्पष्ट की जा सकती हैं अगर हम दो सिद्धांतों –किसी संस्था को मज़बूत करने और किसी संस्था के ढांचे में परिवर्तन करने–के बीच अंतर को अच्छी तरह समझ लें।

अपर्याप्त व्यवस्था

पंचायतों की वर्तमान स्थिति के संदर्भ में एक तर्क यह दिया जा रहा है की पंचायतें कई कारणों से कमज़ोर पड़ गई हैं और वे कारगर भी नहीं रहीं। विकास तथा इससे संबंधित अन्य क्षेत्रों में वे उचित भूमिका क्यों नहीं निभा पा रही हैं; इसके कारणों का पता लगा कर उन्हें दूर करना होगा। दूसरे शब्दों में कहा जाए तो मुद्दा यह है कि पंचायतें एक रचनात्मक और उपयोगी भूमिका निभा तो सकती हैं लेकिन कुछ रूकावटों के कारण वे ऐसा नहीं कर पा रही हैं। इन रूकावटों को रास्ते से हटाना होगा और पंचायतों को मज़बूत करना होगा। समस्या यह है कि यह परिकल्पना इस तर्क पर आधारित है कि पंचायतें कमज़ोर हैं और इस समस्या का समाधान यह है कि पंचायतों को मज़बूत किया जाए।

मोटे तौर पर यही परिकल्पना 64 वें संविधान संशोधन विधेयक में परिलक्षित होती है। इस विधेयक के उद्देश्यों तथा कारणों के वक्तव्य में यह कहा गया है कि कई राज्यों में विभिन्न कारणों से पंचायती राज्य कमज़ोर तथा निष्प्रभावी हो गया है। इनमें समय-समय पर नियमित रूप से चुनाव न कराया जाना, लंबी अवधि तक अधिक्रमण, अनुसूचित जातियों और जनजातियों जैसे कमज़ोर वर्गों तथा महिलाओं को पर्याप्त प्रतिनिधित्व न दिए जाने, वित्तीय संसाधनों का अभाव, अपर्याप्त मात्रा में सौंपे गए अधिकार तथा दायित्वों जैसे कारण शामिल हैं।

इन अपर्याप्त व्यवस्थाओं का जिक्र करते हुए विधेयक में इन्हें समाप्त करने में अनेक प्रावधान भी किए गए हैं जैसे राज्य विधान सभाओं द्वारा पंचायतों को अधिकार तथा दायित्व सौंपा जाना; पंचायतों को वित्तीय दृष्टि से सुदृढ़ किया जाना; पंचायतों के निर्देशों के अंतर्गत पंचायतों के नियमित चुनाव सुनिश्चित करना; अनुसूचित जातियों, जनजातियों और महिलाओं को आरक्षण तथा अन्य उपायों से उचित प्रतिनिधित्व देना इत्यादि।

सुधारों की आवश्यकता

अगर हम कल्पना करें कि पंचायतें अपने सरपंचों या प्रधानों के नेतृत्व में अपने-अपने गांवों में वर्तमान आवश्यकताओं के अनुरूप प्रासंगिक उचित विकास करने के लिए कड़ा संघर्ष कर रही हैं लेकिन ऐसा नहीं कर पा रही हैं क्योंकि वे वित्तीय दृष्टि से अक्षम हैं, क्योंकि वे भंग हो जाने के खतरे में रहते हुए काम कर रही हैं, क्योंकि उनके पास अधिकार नगण्य हैं और वे भी भलीभांति परिभाषित नहीं हैं तो ऐसी स्थिति में उपर्युक्त सुधार वास्तव में वांछनीय प्रतीत होते हैं। भारत के गांवों में जहां-जहां ऐसी स्थिति मौजूद है–वहां ऐसे सुधार किया जाना आवश्यक है।

लेकिन तनिक एक अलग दृश्य की परिकल्पना कीजिए। पंचायत का मुखिया बहुत बड़ा ज़मींदार है जो गरीबों पर जुल्म ढाने के लिए बदनाम है। उसके नाम का पूरे गांव में आतंक है और कोई उसके खिलाफ बोलने का साहस नहीं कर सकता। पंचायत के अन्य सदस्य अनुसूचित जाति के पंचों सहित, या तो उसके खिलाफ कुछ करने की हिम्मत नहीं रखते या फिर उसी के कहने पर पंचायत में सहयोजित किए गए हैं। वह पंचायत को विकास कार्यों के लिए दिए गए धन को अपने निजी फ़ायदे के लिए मनमाने ढंग से प्रयोग करने के लिए अपना दबदबा दिखाता है। वह अपने तथा अपने लोगों के लिए ज्यादा-से-ज्यादा ज़मीनें हड़पता रहता है। जो भी उसके विरुद्ध मुंह खोलने का साहस करता है उसे वह झूठे मामलों में फंसा देता है।

अब ऐसी स्थिति में पंचायतों को मजबूत करने की क्या कोई स्थिति बनती है? इस स्थिति में पंचायतों को सुदृढ़ करने

से गरीबों के लिए हालात और खराब तथा शोषकों को और शह नहीं मिलेगी ? क्या यह आवश्यक नहीं कि ऐसे मामलों में पहले बुनियादी तौर पर सुधार किए जाएं और फिर पंचायतों को मज़बूत करने की बात की जाए ?

यही आकर ढांचे में परिवर्तन लाने का विचार अधिक प्रासंगिक हो जाता है। जब हम केवल किसी संस्था को मजबूत करने की बात कहते हैं तो इस प्रश्न को भूल जाते हैं कि वह संस्था किन के हाथों में पड़ चुकी है। कैसे उसका उपयोग बल्कि दुरूपयोग किया जा रहा है ? हम इस बात की अवहेलना करने लगते हैं कि किसी संस्था को और मज़बूती प्रदान करने और उसे अधिक कारगर तथा संसाधन युक्त बनाने से पहले उसे स्वच्छ किया जाना आवश्यक है।

ढांचे में सुधार करने के दृष्टिकोण का अभिप्राय यही है कि हम बुराई की जड़ तक पहुंचें और उन कारणों को समाप्त करें, जिनकी वजह से यह संस्था चालाक, शरारती लोगों और दमनकारियों के हाथों का खिलौना बन गई है। अगर हम इन गहरे-पैठे तत्वों को नज़रअंदाज़ करते हुए, इन संस्थाओं को लगे हुए घुन की अनदेखी करते हुए इन्हें मज़बूत करने को कहेंगे, तो ढांचे में सुधार के सिद्धांत के अनुसार, ऐसा प्रयास वास्तविक समस्याओं के सुधार की ओर तो नहीं ले जाएगा बल्कि उल्टे निहित स्वार्थों के हाथ और मजबूत हो जाएंगे।

प्रतिनिधित्व कौन करें ?

पंचायती राज से संबंधित 64 वें संविधान संशोधन, विधेयक पर एक बार फिर ज़रा गौर से नज़र डालिए। इस विधेयक का मूल्यांकन अधिकतर इस बात पर निर्भर करेगा कि हम भारत में आज के ग्रामीण परिदृश्य को कितना जानते-समझते हैं। एक बात पर तो लगभग सबकी सहमति होगी या होनी चहिए कि विकेन्द्रीकरण अपने आप में बहुत अच्छा कदम है। स्थानीय लोगों के बारे में विकास योजनाएं बनाते समय इनकी अपनी राय को सबसे अधिक महत्व दिया जाना चाहिए। लेकिन प्रश्न तो यह है कि पंचायत के मंच का वास्तव में प्रयोग कौन करता है ? स्थानीय लोगों का वास्तविक प्रतिनिधि कौन है ?

ऐसी स्थितियों में जब कि संसाधनों के वितरण में अत्याधिक असमानता है, थोड़े से धनी और असरदार लोग कितनी देर से कानूनों और कार्यक्रमों को तोड़-मरोड़ कर अपने हित के लिए इस्तेमाल कर रहे हैं। वास्तव में वे अधिक से अधिक संसाधनों को बीच रास्ते इस तरह से गायब करते हैं कि उन्हें अपनी अधिक समृद्धि के लिए प्रयोग कर सकें—पंचायतों का इस्तेमाल इसी सिलसिले को लगातार जारी रखने के लिए किया जा रहा है। तो इन स्थितियों में निहित स्वार्थों की पंचायतों पर जकड़ को समाप्त करने के व्यापक प्रयासों की अनुपस्थिति में, पंचायती राज को सुदृढ़ करने की कल्पना मात्र से कोई सुपरिणाम नहीं निकलेगा।

सत्ता की आड़ में स्वार्थ

हो सकता है कि कुछ जगहों पर असमानता या अत्याचार अपने उग्ररूप में मौजूद न हो, लेकिन यह भी तो एक तथ्य है कि वर्षों से सत्ता को हथियाने के लिए जोड़-तोड़ करने वाले प्रपंचकारियों की जमात पल चुकी है जो पुलिस सहित अन्य भ्रष्ट अधिकारियों के साथ सांठ-गांठ करके अपने ही गांव वालों को मूंडते हैं। आम गांववासी अपना कोई काम करवाने के लिए इन लोगों पर निर्भर करता है लेकिन वे इस गरीब को कई तरीकों से चूना लगाते हैं। ऐसी जगहों पर भी सत्ता के ऐसे दलाल और प्रपंचकारी पंचायतों का अच्छा खासा दुरूपयोग कर रहे हैं।

हाल के दशकों में इस तरह की प्रवृत्तियों के पैदा होने या पनपने के कारण जो भी रहे हों, लेकिन आज हमारे सामने यह एक हकीकत बन चुकी है कि ऐसे लोग बहुत से गांवों में मौजूद हैं।

चुनाव कौन लड़ेगा ?

ऐसी परिस्थितियों में पंचायतों में सुधार के प्रति हमारा दृष्टिकोण क्या हो ? ज़ाहिर है कि उन्हें और धनराशि आबंटित करने या अतिक्रमण से सुरक्षित कर देने से ही इन प्रश्नों का उत्तर नहीं मिल जाएगा। यह भी स्पष्ट है कि यह बहुत जटिल और कठिन प्रश्न है और इसके किसी सीधे-सादे समाधान से काम नहीं चलेगा। हाल में एक प्रमुख समाजिक कार्यकर्त्ता ने सुझाव दिया था कि जिन व्यक्तियों का आपराधिक-रिकार्ड रहा है उन्हें चुनावों में खड़ा होने की अनुमति नहीं होनी चाहिए। यह एक तथ्य है कि पंचायती राज संस्थाओं में गांवों के गरीबों के लिए काम करने वाले अनेक ईमानदार व्यक्तियों को अपराध के किसी न किसी मामले में झूठा फंसा दिया जाता है। इस सुझाव के अनुसार तो इस तरह के समर्पित व्यक्ति भी चुनाव लड़ने के अयोग्य ठहरा दिए जाएंगे। जब कि वे असरदार लोग, जिनके बारे में साफ पता होता है कि वे अपराध करवाते हैं लेकिन अपने पैसे और रसूख के कारण अपना नाम किसी मामले में नहीं आने

देते, बड़ी आसानी से चुनाव लड़ सकेंगे। वास्तव में, कुछ इलाकों में मौजूदा हालात को देखते हुए आपराधिक रिकार्ड वाले व्यक्ति पर चुनाव लड़ने की पाबंदी लगाने से, ईमानदार सामाजिक कार्यकर्त्ताओं को झूठे मामलों में फंसाने की प्रवृत्ति बढ़ेगी ताकि उन्हें पंचायतों के चुनावों में नामांकित न किया जा सके।

यह उदाहरण केवल इसलिए दिया गया है ताकि आप अंदाज़ा लगा सकें कि उक्त प्रकार के कई सीधे-सादे सुझाव सामने रखे जाएंगे लेकिन बहुत से सुझावों को कार्यरूप देने योग्य नहीं पाया जाएगा।

बुनियादी सुधारों की आवश्यकता

आवश्यकता पंचायती राज में सुधार करने की है। वास्तव में ग्रामीण विकास के क्षेत्र में इन सुधारों की आवश्यकता बहुत देर से महसूस की जा रही है। ये सुधार बहुत पहले किए जाने चाहिए थे। इन बुनियादी बातों में भूमि सुधार लागू करना, बिचौलियों का तंत्र तोड़ना, विकास कार्यक्रमों को लागू करने में भ्रष्ट राजनीतिज्ञों, अधिकारियों की सांठगांठ में सेंध तथा ऐसे अपराधी तथा शोषक तत्वों के खिलाफ कड़ी कार्रवाई करना शामिल है, जो पूरे गांव में अपना आतंक फैलाए रहते हैं और बहुत से गैरकानूनी काम करते हैं। ढांचे में व्यापक सुधारों का यह दृष्टिकोण पंचायतों की संस्था को मजूबत करने के सिद्धांत से कहीं उपयोगी प्रमाणित होगा और बहुत से क्षेत्रों में पंचायती राज की सफलता के लिए महत्वपूर्ण रहेगा।

अगर हम ऐसे गांवों का उदाहरण लें, (जिनकी संख्या काफी कम होने की संभावना है) जहां असमानताएं अपेक्षाकृत कम हैं और जहां पंचायत में ऐसे लोग हैं जो गांव तथा गांववासियों के कल्याण के लिए समर्पित हैं तो संविधान के 64 वें संशोधन विधेयक के कम से कम कुछेक प्रावधान तो उनके लिए सहायक सिद्ध हो सकते हैं। जैसे कि इन प्रावधानों के अंतर्गत उन्हें एक तो अधिक वित्तीय संसाधन प्राप्त होंगे और दूसरे उनका आसानी से अतिक्रमण नहीं किया जा सकेगा। लेकिन यहां भी देखने की बात यह होगी कि कानून के विभिन्न प्रावधानों को कैसे व्यवहार में लाया जाएगा जिससे यह सुनिश्चित हो सके कि पंचायतें इन विकास-योजनाओं को वास्तव में लागू कर सकें जिनसे वे अपने इलाके से गरीबी हटा सकें।

गरीबी और बेरोजगारी दूर करने की कोई भी सक्षम योजना तैयार करते समय पंचायतों को अपने इलाके में उपलब्ध भूमि, जल, मवेशी, वन, खनिजों आदि के उपयोग की योजना बनानी होगी। पर गांवों पर ही नहीं बल्कि पड़ोस के शहरों में भी अड्डा जमा कर बैठे शक्तिशाली निहित स्वार्थों वाले तत्व पहले ही इन संसाधनों को अपने निजी लाभ के लिए दुह रहे हैं। कुछ मामलों में उन्होंने इन संसाधनों के उपयोग के लंबी अवधि के ठेके तथा पट्टे ले रखे हैं। अतः वास्तव में, अपने इलाकों से गरीबी मिटाने के लिए पंचायतों द्वारा विकेंद्रीकृत योजना बनाने के वास्ते ऐसे अनेक परिवर्तन करने होंगे जो कुछ मामलों में गांवोत्तर भी लग सकते हैं। क्या ये सभी परिवर्तन संभव हैं ? क्या निहित स्वार्थों के दबाव का सामना किया जा सकेगा ?. ये कुछ ऐसे प्रश्न हैं जिनका उत्तर इन पंचायतों की खातिर अवश्य खोजना पड़ेगा जो वास्तव में पूरी ईमानदारी से अपने गांवों में गरीबी और बेरोजगारी समाप्त करने, समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम बनाने तथा लागू करने की इच्छुक हैं।

अनुवाद : राजेन्द्र चुग
66/3 बी, कालीबाड़ी मार्ग,
नई दिल्ली 110001

"मैं ग्राम्य पंचायतों को सामाजिक संस्था मानता हूं। किन्तु जाति प्रथा के पतन; वर्तमान शासन प्रणाली के कुप्रभाव और जनता की बढ़ती हुई निरक्षरता के कारण यह प्राचीन और सुन्दर संस्था निकम्मी हो गई है। और जहां ऐसा नहीं हुआ है वहां उसने अपनी पुरानी पवित्रता और प्रभाव को खो दिया है। किन्तु यदि गांवों को बरबाद नहीं करना है तो इस प्रथा को सभी सम्भव प्रयासों से पुनर्जीवित करना ही चाहिए।"

महात्मा गांधी
खंड-46, पृ. 402
यंग इंडिया, 27.8.1931

पंचायती राज व्यवस्था

ज्ञानेन्द्र पाण्डेय

पंचायती राज आजकल चर्चा का विषय है। राजनीतिक स्तर पर जहां इस शब्द के इर्दगिर्द होने वाली चर्चाओं में अगामी लोकसभा चुनाव में कांग्रेस और प्रतिपक्षी दलों की लोकतांत्रिक हैसियत का आंकलन किया जाता है वहीं दूसरी ओर बौद्धिक क्षेत्र की चर्चाओं में इसे प्रशासन के विकेन्द्रीकरण, आजादी का लाभ समाज की प्रत्येक छोटी से छोटी इकाई को मिलने का पर्याय समझा जाता है। सिक्के के दो हिस्सों की तरह पंचायती राज के विषय में होने वाली दोनों तरह की चर्चाएं एक दूसरे की पूरक हैं।

पंचायती राज व्यवस्था पर होने वाली चर्चाओं में आम तौर पर इसके ऐतिहासिक परिवेश और पृष्ठभूमि को नजर अंदाज कर दिया जाता है। वास्तविकता यह है कि प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी आज जिस पंचायती राज की बात कर रहे है उसकी कल्पना तो आजादी से पहले महात्मा गांधी कर चुके थे। गांधीजी जन सामान्य की राजनीति के लिए पंचायत के स्वदेशी माध्यम को महत्वपूर्ण मानते थे। उनके दर्शन में पंचायती संस्थाओं को आर्थिक और प्रशासनिक मजबूती दिलाये जाने की बात स्पष्ट रूप से झलकती है।

आजाद भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित नेहरू ने महात्मा गांधी के इस दर्शन को व्यावहारिक रूप देने का संकल्प लिया था। इसी के तहत 1957 में बलवंतराय मेहता समिति रिपोर्ट का गठन किया गया। समिति का मुख्य काम सामुदायिक विकास और राष्ट्रीय प्रसार सेवा कार्यक्रमों का जायजा और समीक्षा करने का था कि सामुदायिक विकास कार्यक्रमों में आम आदमी की भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए ऐसी संस्थाओं की स्थापना करने की सिफारिश करे। इस बाबत मेहता समिति की मुख्य सिफारिश यह थी कि स्थानीय स्तर पर संविधानिक चुनाव पद्धति से स्थानीय निकायों का गठन किया जाये। इन निकायों को आवश्यक साधन, अधिकार और शक्तियां देने की सिफारिश के साथ ही मेहता समिति ने यह सुझाव भी दिया था कि इनके अधीन विकेन्द्रीकृत प्रशासनिक प्रणाली काम करें। इस सुझाव के तहत मेहता समिति की स्पष्ट मान्यता यह थी कि प्रखंड (ब्लाक) या समिति को लोकतंत्र की बुनियादी इकाई के रूप में मान्यता दी जाये। प्रखंड (ब्लाक) या समिति के साथ ही कुछ गांवों या गांवों के समूहों के लिये एक पंचायत की स्थापना करने का सुझाव भी मेहता समिति ने दिया था। पंचायत के सदस्य प्रत्यक्ष मतदान प्रणाली से चुने जायें और प्रखंड स्तर पर पंचायत समिति बनाई जाये जो कार्यकारी संस्था के रूप में काम करे। इसमें प्रत्यक्ष मतदान और मनोनीत दोनों प्रकार के सदस्य बनाने की सलाह दी गई थी। जिला स्तर पर एक परामर्शदायी समिति के रूप में जिला परिषद का गठन करने की बात कही गई थी।

इस प्रकार बलवंतराय मेहता समिति की सिफारिश से प्रशासन को गांव के स्तर पर विकेन्द्रित करने का सिलसिला हुआ। समिति की सिफारिशों के अनुरूप ही प्रधानमंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरू ने गांधीजी के जन्म दिन 2 अक्तूबर 1959 को नागौर (राजस्थान) में देश की पहली पंचायती राज संस्था का शुभारम्भ किया। उस समय पंडित नेहरू ने कहा था –

"नये भारत के सन्दर्भ में यह सबसे ज्यादा क्रांतिकारी और ऐतिहासिक कदम है।" पंडित नेहरू का यह स्पष्ट मानना था कि भारत की आजादी निचले स्तर से ही शुरू होनी चाहिये। उनकी कल्पना थी कि प्रत्येक गांव एक लोकतंत्र या प्रजातंत्र होगा, जिसको सारे अधिकार प्राप्त होंगे। हर गांव आत्म निर्भर हो तथा अपनी समस्याओं का समाधान करने में सक्षम हो, उसे अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पड़ौसियों पर आश्रित न होना पड़े बल्कि सभी गांव एक-दूसरे का पूरक बने, यही ग्राम स्वराज से उनका अभिप्राय था।"

ऐसा नहीं है कि बलवंतराय मेहता समिति पंचायती राज की अवधारणा का अंतिम पड़ाव थी। समय-समय पर इसका आंकलन किया जाता रहा। शुरूआती दौर में जब यह देखा गया कि पंचायती राज संस्थाओं में केवल ऊंची जाति के लोग हावी होते जा रहे हैं तथा पिछड़े व कमजोर वर्ग के लोग उदासीन न होने के कारण राजनीतिक दृष्टि से भी अलग-थलग पड़ गये हैं तब 1977 में इस अवगुण के निराकरण का सार्थक हल जानने के लिए अशोक मेहता की अध्यक्षता में 13 सदस्यीय समिति का गठन किया गया। इस समिति ने भी अन्य बातों के अलावा पंचायती राज संस्थाओं की मजबूती के लिए एक संवैधानिक प्रावधान की जरूरत

महसूस की थी। पर दुर्भाग्यवश समिति की अधिकांश सिफारिशों को 1979 में हुए मुख्य मंत्रियों के सम्मेलन ने नहीं माना। परिणामस्वरूप पंचायतों को मिलने वाला संवैधानिक अधिकार दूर होता चला गया।

इसके बाद 25 मार्च 1983 को योजना आयोग के भूतपूर्व सदस्य जी.वी. के. राव की अध्यक्षता में गठित 12 सदस्यीय समिति ने भी पंचायती राज संस्थाओं के नियमित चुनाव कराने की सिफारिश की। इस प्रसंग में एक तथ्य यह गौर तलब है कि 1959 से 1983 तक जब भी पंचायती राज संस्थाओं के विषय पर राष्ट्रीय स्तर की जितनी चर्चाएं हुईं सभी में पंचायतों को संवैधानिक चुनाव का दर्जा देने की बात कही गई। साथ ही राज्य सरकारों को अपने हिसाब में अपने राज्यों में पंचायती राज व्यवस्था को लागू करने की आजादी दी जाती रही। परिणामस्वरूप किसी भी राज्य सरकार ने पंचायतों को इतने अधिकार नहीं दिये कि वे आत्मनिर्भर बन सकें। अपना राजनीतिक वर्चस्व बनाये रखने की गरज से राज्य सरकारों ने विधारित अवधि में पंचायती संस्थाओं के चुनाव कराना भी ठीक नहीं समझा क्योंकि कोई संवैधानिक दबाव भी नहीं था। इसलिए चुनाव कराने या न कराने के प्रश्न को चुनौती भी नहीं दी जा सकती थी। इसलिए पंचायतों के गठन के बावजूद उसके वैसे लाभदायक परिणाम देखने को नहीं मिले जिनकी कल्पना महात्मा गांधी ने की थी और जिसे पंडित नेहरू लागू करना चाहते थे।

जिस प्रकार विधान सभाओं और लोक सभा के चुनाव निर्धारित अवधि में करने की संवैधानिक अनिवार्यता है वैसी ही व्यवस्था पंचायती राज संस्थाओं के चुनाव के सम्बन्ध में भी होनी चाहिये। विधि सम्मत चुनाव से स्थापित इन संस्थाओं को अपना काम देखने की स्वायत्ता मिल सके तभी गांधी के स्वराज की कल्पना साकार हो सकती है। प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी ने यदि ऐसा कोई क्रांतिकारी कदम उठाया है तो उसकी सराहना की जानी चाहिये।

पंचायती राज सम्बन्धी नया विधेयक संसद के पिछले सत्र में संसद में लाया जा चुका है। मानसून सत्र में इस विधेयक के सम्पूर्ण पहलुओं पर विचार विमर्श होगा और यदि जरूरत महसूस हुई तो कुछ संशोधनों के बाद यह विधेयक संसद पारित कर देगी। देखना यह है कि इस विधेयक में गांधी और नेहरू की पंचायती राज सम्बन्धी अवधारणा को कितनी ईमानदारी से और किस मात्रा में समावेश किया गया है।

पंचायती राज की सफलता के लिए यह जरूरी है इन संस्थाओं में प्रत्यक्ष मतदान के जरिये समाज के कमजोर और पिछड़े वर्गों—अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लोगों को उनकी आबादी के हिसाब से समुचित प्रतिनिधित्व दिया जाना चाहिये। यद्यपि जिला परिषद के अध्यक्ष तथा मंडल पंचायत के अध्यक्षों का चुनाव परोक्ष मतदान से भी हो सकता है पर पंचायतों के स्तर पर मतदान प्रत्यक्ष प्रणाली से ही हो।

प्रस्तावित पंचायती राज व्यवस्था में यह व्यवस्था होनी चाहिये कि चूंकि संविधान के अनुसार पंचायती राज संस्थायें, स्थानीय स्व-शासन की एक इकाई होने के कारण राज्य का विषय है अतः राज्यों को अपनी स्थानीय परिस्थितियों के अनुकूल पंचायतों की संरचना, शक्तियां व कार्य करने के अधिकार दिये जाने चाहिये। साथ ही पंचायतों को अपनी आत्मनिर्भरता बढ़ाने के लिए यह जरूरी है कि राज्य सरकार से मिलने वाली वार्षिक आर्थिक मदद के अलावा ये संस्थाए अपने आर्थिक स्रोत भी जुटायें। इसके लिए यह प्रावधान होना चाहिये कि पंचायती राज संस्थाओं के पास कराधान की कुछ अनिवार्य शक्तियां उपलब्ध कराई जायें।

ए—3/300
पश्चिम विहार, नई दिल्ली—110063

> लोकतंत्र हिन्दुस्तान के लिए कोई नई बात नहीं हैं क्योंकि इसकी जड़ें हमारी पुरानी पंचायत प्रणाली में पाई जा सकती हैं। यह प्रणाली शायद इसलिए अस्तित्व में आई क्योंकि गांव और लोग राजनीतिक सत्ता के केन्द्र से बहुत दूर हो चुके थे। आज यह प्राचीन संस्था जिला स्तर पर और ब्लाक स्तर पर स्वशासन का एक अंग बन गई है और सरकार के कार्यक्रमों तथा जनता के बीच एक कड़ी का रूप ले चुकी है।
>
> (इन्दिरा गांधी,
> रायल इंस्टीटयूट आफ इंटरनेशनल
> रिलेशन्स, लन्दन में 29 अक्तूबर, 1971 को भाषण)

पंचायती राज एवं चौंसठवां संविधान संशोधन विधेयक 1989

अरूण

आजादी के बाद बीते चार दशकों में पंचायतों को सत्ता सौंपने के बारे में भले ही कितना भी चिन्तन हुआ हो, मगर प्रस्तावित पंचायती राज विधेयक को लेकर जितनी चर्चाएं अब हो रही हैं, उतनी पहले कभी नहीं हुईं। चुनावी वर्ष में इस प्रकार से लाया गया पंचायती राज प्रस्ताव न केवल उच्च राजनीतिक स्तरों पर खलबली मचा रहा है, बल्कि इसकी गूंज से ठेठ देहात में रहने वाली जनता भी अछूती नहीं बची है। राजनीतिक क्षेत्रों में इसके व्यापक प्रभाव की तो तीव्र संभावनाएं हैं ही, साथ में ग्रामीणों को भी इस बात का अहसास हो चला है कि उनके हाथों में कुछ ऐसा आने वाला है, जो उनका राजनीतिक भूगोल बदल डालेगा।

निःसंदेह पंचायतों के हाथ में ज्यादा अधिकार देकर सत्ता के विकेन्द्रीकरण का विरोध कोई नहीं करना चाहेगा, मगर जो आशंकाएं-कुशंकाएं व्यक्त की जा रही हैं, वे महज इस विकेन्द्रीकरण की पद्धति को लेकर हैं। अगर इसकी बुनियाद में छिपे चुनावी कारण छोड़ दिए जाएं तो इसका सहज विश्लेषण संभव हो सकता है। लेकिन, इससे पहले प्रस्तावित पंचायती राज विधेयक का अध्ययन भी आवश्यक है।

पंचायती राज के लिए चौसठवें संविधान संशोधन विधेयक--1989 के मूल पाठ में कहा गया है कि-- (1) इस अधिनियम का संक्षिप्त नाम संविधान (चौसठवां संशोधन) अधिनियम, 1989 है। (2) यह उस तारीख को प्रवृत्त होगा जो केंद्रीय सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा नियत करे। (3) संविधान के भाग 8 के पश्चात निम्नलिखित भाग अंतःस्थापित किया जाएगा। अर्थात पंचायतों की परिभाषा इस प्रकार होगी, इस भाग में जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो (क) 'जिला' से राज्य का भू-राजस्व जिला अभिप्रेत है। (ख) 'मध्यवर्ती स्तर' से ग्राम और जिला स्तरों के बीच का स्तर अभिप्रेत है जो किसी राज्य के राज्यपाल द्वारा, इस भाग के प्रयोजनों के लिए, लोक अधिसूचना द्वारा, मध्यवर्ती स्तर विनिर्दिष्ट किया जाए।

(ग) 'पंचायत' से ग्राम स्तर या जिला स्तर या किसी मध्यवर्ती स्तर पर ग्रामीण क्षेत्रों के लिए स्वायत्त शासन की कोई संस्था (चाहे वह किसी भी नाम से ज्ञात हो) अभिप्रेत है।

धारा 243 (ख) के अनुसार पंचायतों की संरचना के सम्बन्ध में कहा गया है कि (1) इस भाग के उपबंधों के अधीन रहते हुए, राज्य का विधानमंडल, विधि द्वारा, पंचायतों की संरचना के लिए उपबंध कर सकेगा।

परन्तु किसी भी स्तर पर पंचायत के राज्यक्षेत्र की जनसंख्या का अनुपात ऐसी पंचायत में निर्वाचन से भरे जाने वाले स्थानों की संख्या से समस्त राज्य में, यथासाध्य एक ही होगा।

(2) खंड (3) में ऐसा उपबंधित है उसके सिवाय, पंचायत के सभी स्थान पंचायत क्षेत्र के प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्रों से प्रत्येक निर्वाचन द्वारा चुने गए व्यक्तियों से भरे जाएंगे और इस प्रयोजन के लिए प्रत्येक पंचायत क्षेत्र ऐसी रीति से निर्वाचन-क्षेत्रों में विभाजित किया जाएगा कि प्रत्येक निर्वाचन-क्षेत्र की जनसंख्या का उसको आबंटित स्थानों की संख्या से अनुपात समस्त पंचायत क्षेत्र में, यथासाध्य एक ही हो।

(3) राज्य का विधानमंडल, विधि द्वारा, ऐसी रीति से और ऐसी शर्तों के अधीन रहते हुए जो ऐसी विधि में विनिर्दिष्ट की जाएं:-

(क) ग्राम स्तर पर पंचायतों के अध्यक्षों का मध्यवर्ती स्तर पर पंचायतों में, या ऐसे राज्य की दशा में जहां मध्यवर्ती स्तर पर पंचायतें नहीं हैं, जिला स्तर पर पंचायतों में।

(ख) मध्यवर्ती स्तर पर पंचायतों के अध्यक्षों का जिला स्तर पर पंचायतों में।

(ग) लोक सभा के सदस्यों और राज्य की विधानसभा के ऐसे सदस्यों का, जो ऐसे निर्वाचन-क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व करते हैं जिनमें ग्राम स्तर से भिन्न स्तर पर कोई पंचायत क्षेत्र पूर्णतः या भागतः समाविष्ट हैं, ऐसी पंचायत में, प्रतिनिधित्व के लिए उपबंध कर सकेगा।

(4) पंचायत के अधिवेशनों में मतदान का अधिकार पंचायत के केवल ऐसे अध्यक्ष और अन्य सदस्यों को होगा जो पंचायत क्षेत्र के प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्र से प्रत्यक्ष निर्वाचन

द्वारा चुने जाते हैं।

(5) क—ग्राम स्तर पर पंचायत का अध्यक्ष, ऐसी रीति से जो राज्य के विधानमंडल द्वारा, विधि द्वारा, उपबंधित की जाए, निर्वाचन से चुना जाएगा।

(ख) मध्यवर्ती स्तर या जिला स्तर पर पंचायत का अध्यक्ष उसके सदस्यों द्वारा, और अपने में से, निर्वाचित किया जाएगा।

(6) जहां पंचायत का अध्यक्ष पंचायत के निर्वाचित सदस्यों द्वारा, और अपने में से, निर्वाचित किया गया है वहां उसे अध्यक्ष के पद से हटाने के लिए पंचायत का कोई संकल्प तब तक विधिमान्य और प्रभावी नहीं होगा जब तक कि ऐसा संकल्प पंचायत के निर्वाचित सदस्यों की कुल संख्या के बहुमत द्वारा और ऐसे सदस्यों में से उपस्थित और मत देने वाले सदस्यों के कम से कम दो-तिहाई बहुमत द्वारा पारित नहीं कर दिया जाता है।

पंचायती चुनावों में स्थानों का आरक्षण इस प्रकार रखा गया है कि प्रत्येक पंचायत में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए स्थान आरक्षित रहेंगे और इस प्रकार आरक्षित स्थानों की संख्या का अनुपात उस पंचायत में प्रत्येक निर्वाचन से भरे गए स्थानों की कुल संख्या से, यथाशक्य वही होगा जो उस पंचायत क्षेत्र में अनुसूचित जनजातियों की जनसंख्या से है।

परन्तु जहां किसी पंचायत क्षेत्र में अनुसूचित जातियों या अनुसूचित जनजातियों की जनसंख्या किसी स्थान के आरक्षण के लिए पर्याप्त नहीं है वहां उस पंचायत में एक स्थान अनुसूचित जातियों के लिए या, एक स्थान अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षित रहेगा।

आरक्षित स्थानों की कुल संख्या के, यथाशक्य निकटतम, तीन प्रतिशत स्थान अनुसूचित जातियों या अनुसूचित जनजातियों की स्त्रियों के लिए आरक्षित रहेंगे।

परंतु जहां अनुसूचित जातियों या अनुसूचित जनजातियों के लिए केवल दो स्थान आरक्षित हैं वहां उन दो स्थानों में से एक स्थान अनुसूचित जातियों या अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षित रहेगा।

कोई बात राज्य के विधान मंडल की अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और स्त्रियों के लिए पंचायत के अध्यक्ष पद के लिए आरक्षण हेतु उपबंध करने से निर्वाचित नहीं करेगी।

प्रत्येक पंचायत में प्रत्येक निर्वाचन से भरे गए स्थानों की कुल संख्या के, यथाशक्य निकटतम, तीस प्रतिशत स्थान (जिसके अंतर्गत अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की स्त्रियों के लिए आरक्षित स्थानों की संख्या सम्मिलित है) स्त्रियों के लिए आरक्षित रहेंगे और चक्रानुक्रम से पंचायत के विभिन्न निर्वाचन क्षेत्रों को आबंटित किए जाएंगे।

पंचायतों के कार्यकाल के बारे में धारा 243 (घ) एक में कहा गया है कि प्रत्येक पंचायत, यदि तत्समय प्रवृत्त किसी विधि के अधीन उसे पहले ही विघटित नहीं कर दिया जाता है तो, उसके प्रथम अधिवेशन के लिए नियत तारीख से पांच वर्ष की अवधि तक, न कि उससे अधिक, बनी रहेगी, और उक्त पांच वर्ष की अवधि के अवसान पर पंचायत का विघटन हो जाएगा।

पंचायतों की शक्तियों, प्राधिकारों और उत्तरदायित्वों के संबंध में प्रावधान है कि, इस संविधान के उपबंधों के अधीन रहते हुए राज्य का विधानमंडल विधि द्वारा, पंचायत को ऐसी शक्तियां और अधिकार प्रदान कर सकेगा, जो वह उन्हें स्वायत्तशासन की संस्थाओं के रूप में कार्य करने योग्य बनाने के लिए आवश्यक समझें और ऐसी स्थिति में पंचायत को, उपयुक्त स्तर पर, ऐसी बातों के अधीन रहते हुए जैसी उसमें विनिर्दिष्ट की जाएं, निम्नलिखित के संबंध में शक्तियां और उत्तरदायित्व न्यायगत करने के लिए उपबंध किए जा सकेंगे:—

(क) आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय के लिए योजनाएं तैयार करना।

(ख)आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय के कार्यक्रमों को, जो उन्हें सौंपे जाएं, जिनके अंतर्गत वे कार्यक्रम भी हैं जो ग्यारहवीं अनुसूची में सूचीबद्ध विषयों के संबंध में हैं, क्रियान्वित करना।

पंचायतों द्वारा कर अधिरोपित करने की शक्ति और पंचायतों की निधियों के बारे में व्यवस्था करते हुए कहा गया है कि राज्य का विधानमंडल, विधि द्वारा ऐसी प्रक्रिया के अनुसार और ऐसी सीमाओं के अधीन रहते हुए, ऐसे कर, शुल्क, पथ कर और फीसें उदग्रहीत, संग्रहीत और विनियोजित करने के लिए पंचायत को प्राधिकृत कर सकेगा।

पंचायतों के लिए राज्य की संचित निधि में से ऐसे सहायता अनुदान देने के लिए उपबंध कर सकेगा और पंचायतों द्वारा या उनकी ओर से प्राप्त सभी धनों के जमा करने के लिए ऐसी निधियों का गठन तथा ऐसी निधियों में से धन का प्रत्याहरण करने के लिए भी उपबंध कर सकेगा जो उस विधि में विनिर्दिष्ट किए जाएं।

राज्य का विधान मंडल विधि द्वारा, ऐसी अर्हताएं, जो आयोग के सदस्यों के रूप में नियुक्ति के लिए अपेक्षित होंगी और वह रीति जिससे उन्हें चुना जाएगा, अवधारित कर सकेगा। आयोग अपनी प्रक्रिया अवधारित करेगा और उसे अपने कृत्यों के पालन के लिए ऐसी शक्तियां होंगी जो राज्य को विधानमंडल विधि द्वारा उसे प्रदान करे।

पंचायतों के लेखे ऐसे प्रारूप में रखे जाएंगे जैसे राज्यपाल, भारत के नियंत्रक महालेखा परीक्षक के परामर्श से, विहित करें। भारत का नियंत्रक महालेखा परीक्षक पंचायतों के लेखाओं की, ऐसी रीति से जो वह ठीक समझे, संपरीक्षा करवाएगा और नियंत्रक महालेखा परीक्षक का प्रतिवेदन राज्य के राज्यपाल को प्रस्तुत किया जाएगा जो उसे राज्य के विधान मंडल के समक्ष रखवाएगा।

पंचायतों के निर्वाचनों का अधीक्षण, निर्देशन और नियंत्रण निर्वाचन आयोग में निहित होगा।

प्रस्तावित नई ग्यारहवीं अनुसूची अनुच्छेद (243-ड) के 29 प्रावधान इस प्रकार है : कृषि, (जिसके अंतर्गत कृषि विस्तार भी है); भूमि सुधार और मृदा संरक्षण; लघु सिंचाई; जल प्रबन्ध और जल आच्छादन विकास; पशुपालन दुग्ध उद्योग और कुक्कुट पालन; मत्स्य उद्योग; सामाजिक वनोद्योग और फार्म वनोद्योग; लघु उद्योग (जिसके अंतर्गत खाद्य प्रसंस्करण उद्योग भी हैं); खादी; ग्राम और कुटीर उद्योग; ग्रामीण आवासन; पेय जल; ईंधन और चारा; सड़कें; पुलिया; पुल; नौघाट; जलमार्ग तथा संचार के अन्य साधन; ग्रामीण विद्युतीकरण (जिनके अंतर्गत विद्युत का वितरण भी है); गैर पारम्परिक ऊर्जा स्रोत; गरीबी उपशमन कार्यक्रम; शिक्षा (जिसके अंतर्गत प्राथमिक और माध्यमिक विद्यालय भी हैं); तकनीकी प्रशिक्षण और व्यावसायिक शिक्षा; प्रौढ़ और अनौपचारिक शिक्षा; पुस्तकालय; सांस्कृतिक क्रियाकलाप; बाजार और मेले; स्वास्थ्य और स्वच्छता (जिसके अंतर्गत अस्पताल; प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र और औषधालय भी हैं); परिवार कल्याण; स्त्री और बाल विकास; समाज कल्याण (जिसके अंतर्गत विकलांगों और मानसिक रूप से अविकसित व्यक्तियों का कल्याण भी है); जनता के कमजोर वर्गों का विशेष रूप से अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों का कल्याण; लोक वितरण प्रणाली तथा सामुदायिक आस्तियों का अनुरक्षण।

इस विधेयक के पक्ष में जो कुछ कहा जा रहा है, उसमें अहम् बात सत्ता के विकेन्द्रीकरण की ही है। प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी का इस बारे में कहना है कि इस विधेयक के जरिए लोकतंत्र में जनता के दावे करीब 115 गुना ज्यादा बढ़ जाएंगे, क्योंकि इसके बाद मौजूदा 5-6 हजार जन प्रतिनिधियों के अतिरिक्त लगभग सात लाख नए जन प्रतिनिधि लोकतांत्रिक संस्थाओं में भागीदार बनेंगे। हर स्तर पर पंचायत के चुनाव सीधे निर्वाचन द्वारा होंगे, अप्रत्यक्ष रूप से नहीं। ग्राम पंचायत में, मंझली सीढ़ी की पंचायत में और जिला पंचायत में हर सदस्य मतदाता का अपना प्रतिनिधि होगा, जो अपने छोटे और सुपरिभाषित निर्वाचन क्षेत्र के प्रति जवाबदेह होगा। इससे सत्ता में दलालों की भूमिका को खत्म किया जा सकेगा।

श्री गांधी ने संसद में दिए अपने वक्तव्य में स्पष्ट किया था कि इस विधेयक के माध्यम से पंचायत चुनावों में अनियमितता और अनिश्चितता को भी खत्म किया जा सकेगा। उन्होंने कहा कि इससे पंचायतों के पंचवर्षीय चुनावों को संविधान का अंग बना दिया जाएगा। इसके जरिए पंचायतों को निलम्बित या भंग करने की एक घातक बीमारी से भी निजात पाई जा सकेगी। भंग की गई पंचायतों को एक निश्चित समय में पुनर्जीवित करने की फिलहाल कोई कानूनी मजबूरी तो है नहीं, इसलिए भंग पंचायतों के चुनाव बरसों तक नहीं हो पाते, और कई बार दस-दस, पन्द्रह-पन्द्रह साल तक कोई उनकी सुध नहीं लेता। राज्य विधान सभाओं ने इस सिलसिले में जो कानून बनाए हैं, उनमें पंचायती संस्थाओं को नुकसान पहुंचाने के लिए सरकार को भारी अधिकार दे दिए गए हैं। आलम यह है कि राज्य सरकारों के पास चुनाव न कराने के लिए इतने बहाने हैं कि इन संस्थाओं के जनप्रतिनिधि उनके रहमों-करम पर आश्रित होकर रह गए हैं।

श्री राजीव गांधी के अनुसार प्रस्तावित विधेयक में यह राज्यों पर छोड़ दिया गया है कि वे तय करें कि किन आधारों पर पंचायतों को भंग अथवा निलम्बित किया जाएगा।

प्रधानमंत्री इस बात से साफ इंकार करते हैं कि इस विधेयक के कारण राज्यपालों को कुछ विशेष संवैधानिक अधिकार मिल जाएंगे। उनकी दलील है कि संविधान के अनुच्छेद 154(1) में स्पष्ट तौर पर लिखा है कि राज्य के कार्यकारी अधिकार राज्यपाल में अन्तर्निहित होंगे। अनुच्छेद 163(1) में यह बात साफ कर दी गई है कि एक मंत्रिपरिषद होगी, जिसका अध्यक्ष मुख्यमंत्री होगा और वह राज्यपाल को अपने कार्यों के निर्वहन में सलाह एवं सहायता देगा। हालांकि, केवल एक अपवाद इस अनुच्छेद में है कि जब राज्यपाल संविधान के अंतर्गत स्वविवेक से अपने कार्यों का निर्वहन करेगा, तब वह मंत्रिपरिषद की सलाह से नहीं चलेगा। तथापि राज्यपाल और स्वविवेक से काम करने वाले राज्यपाल के बीच जो फर्क है वह संविधान के अंतर्गत इतना जाना पहचाना है कि कोई गलतफहमी होनी ही नहीं चाहिए।

प्रधानमंत्री ने इस विधेयक के जरिए आरक्षण की भी बात की है। उन्होंने कहा कि ग्रामीण भारत के दौरों और अनेक पंचायती सम्मेलनों में हुई बातचीत के आधार पर जो निष्कर्ष निकला है, उससे लगता है कि हरिजनों और आदिवासियों के लोकतांत्रिक अधिकारों की रक्षा सिर्फ नेक इरादों से नहीं हो सकती। यह रक्षा तभी हो सकती है जबकि लोकसभा और विधानसभाओं की तरह पंचायती संस्थाओं में भी फिलहाल आरक्षण का प्रबन्ध कर दिया जाए। विधेयक में तय किया गया है कि राज्य विधानसभाओं जो कानून बनाएंगी, उन में जनसंख्या का अनुपात देखते हुए अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षण अनिवार्य होगा।

मौजूदा संविधान से बिलकुल अलग एक नई बात भी इस विधेयक में है। यह है पंचायतों में हर स्तर पर महिलाओं के लिए 30 प्रतिशत सीटों का आरक्षण।

प्रधानमंत्री इन आरोपों को बेबुनियाद और गलत बताते हैं कि इस विधेयक के जरिए केन्द्र जिलों पर सीधा शासन करना चाहता है। वे कहते हैं कि सत्ता सौंपने के बारे में राज्य सरकारों के अधिकारों का पूरा-पूरा ध्यान रखा गया है। लेकिन केन्द्र राज्य विधान सभाओं से इतनी उम्मीद तो करता ही है कि इस विधेयक के प्रावधानों और अभिप्रायों को मद्देनजर रखकर वे ऐसे कानून बनाएं जो सत्ता व अधिकारों को पंचायतों के हाथ सौंप सकें। श्री गांधी का विचार है कि इस विधेयक से न सिर्फ आर्थिक विकास के नियोजन की जिम्मेदारी पंचायतों को सौंपी जाएगी बल्कि सामाजिक न्याय का गुरूत्तर भार भी उनके कंधों पर आएगा। संविधान में जो नई ग्यारहवीं अनुसूची प्रस्तावित है वह गरीबी हटाने से संबंधित योजनाओं की अधिकांश प्रशासकीय जिम्मेदारी पंचायतों को सौंपती है।

इन दावों के बावजूद कांग्रेस-विरोधी खेमा संतुष्ट नहीं है। वह पंचायती राज लाने का तो समर्थन करता है, मगर उसे आशंका इसके पीछे कथित नीयत को लेकर है। विपक्ष का कहना है कि इस विधेयक के माध्यम से केन्द्र को राज्य सरकार के मामलों में सीधे हस्तक्षेप करने का अधिकार मिल जाएगा। संविधान के अनुच्छेद 163(1) के जरिए केन्द्र राज्यपालों द्वारा पंचायती कामकाज में दखलंदाजी कर सकता है।

कुछ विरोधी दल प्रधानमंत्री की इस दलील से भी सहमत नहीं हैं कि प्रस्तावित पंचायती राज विधेयक मौजूदा भारतीय ग्रामीण परिवेश के लिए सार्वभौमिक तौर पर उपयुक्त है। इन दलों का मानना है कि पंचायती प्रणाली का स्वरूप राज्यों के अनुसार भिन्न-भिन्न होना चाहिए हालांकि विधेयक की हद से तीन पूर्वी राज्यों, दार्जिलिंग के गोरखा पर्वतीय परिषद के इलाकों और मणिपुर के जिला परिषद इलाकों को बाहर रखा गया है, मगर विपक्ष इसे राज्यों की परिस्थितियों के अनुसार पृथक रखना चाहता है।

इस विधेयक की उपादेयता पर भी प्रश्नचिह्न खड़ा करने की कोशिशें जारी है। यह बात जोर-शोर से उठाई जा रही है कि प्रस्तावित विधेयक तीन दशक पुरानी अवधारणाओं पर आधारित है और इसे बनाने से पहले वर्तमान हालातों की छानबीन नहीं की गई। इसके पक्ष में एक ठोस तर्क यह दिया जा रहा है कि हाल ही में देश के कुछ राज्यों में ग्राम प्रधान के आर्थिक रूप से अलाभकारी चुनावों में जिस कदर हिंसा देखने को मिली है उससे इस बात को नजरंदाज नहीं किया जा सकता कि पंचायत के लाभकारी चुनावों में इसका अधिक भयानक रूप सामने नहीं आएगा।

ए–34, अरूणा पार्क कॉलोनी,
शकरपुर, दिल्ली 92

ग्रामीणों के सुखद भविष्य की आशा पंचायती राज

बृज भूषण वाजपेयी

आज देश में चारों तरफ चर्चा का विषय है—"पंचायती राज व्यवस्था।" इस व्यवस्था के नये सिरे से लागू होने की आशा में जहां ग्रामीण जनता में एक नई उमंग आई है, वहीं दूसरी ओर विपक्षी दलों ने इसके बारे में अनेक शंकाएं प्रकट की हैं। विपक्षी नेता तरह-तरह की अटकलबाजियां लगा कर इसे राज्य सरकारों के अधिकार पर हमला बता रहे हैं तथा वे इसे मात्र चुनावी प्रचार का हथकंडा बता रहे हैं, जिसे सतारूढ़ दल ने आगामी चुनाव लड़ने के लिए शुरू किया है।

परन्तु जो भी हो पंचायती राज व्यवस्था हमारे देश के लिए नयी नहीं है। प्राचीन समय से ही हमारे देश के गांवों में अत्यंत समृद्ध पंचायती व्यवस्था रही हैं, जिसे अंग्रेजों ने नष्ट किया। पंच परमेश्वर की अत्यंत विश्वस्त और गरिमामय परंपरा ने गांवों को स्वशासन और आत्मनिर्भरता का जो मंत्र दिया था वह स्वाधीनता संग्राम के दौरान महात्मा गांधी सहित पूरे देश का एक महान स्वप्न बन गया। ग्राम स्वराज का यह स्वप्न पंडित जवाहरलाल नेहरू को तो इतना प्रिय था कि वे गांव-गांव में पंचायतों के जरिए ऐसी प्रतिभाओं का विकास करने में जुट गए जिन्हें वे बहुत शान के साथ 'स्थानीय प्रधानमंत्री' कहना चाहते थे। उन्होंने कहा था-"गांवों के लोगों को अधिकार सौंपना चाहिए। उन्हें काम दो, चाहे वे हजारों गलतियां करें। इसमें घबराने की जरूरत नहीं है। पंचायतों को अधिकार दो।"

1959 में गांधी जयन्ती के अवसर पर राजस्थान में, नागौर में, पंचायती राज का श्रीगणेश करते समय पंडित नेहरू ने कहा था-"लाखों गांवों के स्तर को ऊंचा उठाना कोई आसान काम नहीं है....धीमी प्रगति का कारण सरकारी तंत्र पर हमारी निर्भरता है। शायद एक अधिकारी आवश्यक है क्योंकि वह एक विशेषज्ञ है लेकिन वह काम तभी संभव है जब लोग स्वयं अपने हाथ में जिम्मेदारी लें। लोगों से केवल परामर्श लेना ही पर्याप्त नहीं है। उनके हाथों में प्रभावी शक्ति भी होनी चाहिए।"

इसी मार्मिक अवधारणा के आधार पर, जो कि पहली कार्यशाला में स्पष्ट थी, हमारे प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी ने जिला अधिकारियों से इस विषय पर विचार-विमर्श किया कि आखिर 30 वर्ष पूर्व बड़ी आशाओं के साथ प्रारंभ किए गए इस प्रयोग में कहां गलती हुई।

वैसे कहने को ग्रामीण शासन-व्यवस्था के नाम पर पंचायती राज 30 साल पहले ही अस्तित्व में आ गया था। देश के छह लाख गांवों के लिए लगभग 2 लाख बीस हजार ग्राम पंचायतें हैं, पांच हजार ब्लाकों के लिए साढ़े तीन हजार पंचायत समितियां हैं और चार सौ जिलों के लिए दो सौ सैंतालीस जिला परिषदें हैं। लेकिन दुर्भाग्य से यह सब हमारे लोकतंत्र के पथभ्रष्ट हो जाने की व्यवस्था कह रही हैं। पंचायती राज व्यवस्था के विफल हो जाने के पीछे अनेक कारण थे। मुख्य कारण पंचायतों का समय पर चुनाव न कराया जाना है। सरकार ने अब इसे मजबूत बनाने तथा पंचायतों को और अधिक अधिकार दिलाने के इरादे से 15 मई को लोकसभा के बजट अधिवेशन में 64वें संविधान संशोधन विधेयक के रूप में प्रस्तुत किया।

परन्तु जो लोग इस पंचायती राज कानून की आलोचना कर रहे हैं वे अपने राजनीतिक स्वार्थ के कारण जाने-अनजाने में ग्रामीण जनता के हितों और गरीबों के हितों पर कुठाराघात कर रहे हैं।

प्रधानमंत्री ने यह विधेयक लोकसभा में एकाएक नहीं पेश कर दिया। पिछले कई वर्षों से पूरे देश में इस पर बहस चल रही है। विचार विमर्श हो रहे हैं। प्रधानमंत्री ने पंचायती राज के दस हजार से अधिक प्रतिनिधियों से दिल्ली, कलकत्ता, बंगलौर आदि में आयोजित सम्मेलनों में बातचीत की। विपक्ष ने इस संबंध में भी अपना असहयोग दर्ज कराया। राज्यों के पंचायती राज्य मंत्रियों तथा मुख्यमंत्रियों से विचार-विमर्श के लिए आयोजित बैठक को लेकर भी विपक्षी नेता दुविधा में रहे। वे भी इन बैठकों में शामिल हुये।

ऐसी संभावना है कि पंचायती राज विधेयक पर संसद की मंजूरी की मोहर मानसून सत्र में लगेगी। इस बीच प्रधानमंत्री चाहते हैं कि "देश की जनता की ओर से प्रस्तुत इन प्रस्तावों पर आगामी महीनों में देशभर में खुली बहस

हो। उन्होंने आश्वासन दिया है कि वह विपक्षी नेताओं तथा मुख्यमंत्रियों से विचार-विमर्श के लिए तैयार हैं और संसद में भी सुझाव रखे जाएंगे। उन्हें पूरे ध्यान के साथ सुना जाएगा। वे इसके लिए आम राय बनाना चाहते हैं। उन्होंने जनता के अधिकारों, लोकतंत्र और विकास के लिए संघर्ष करने के लिए संकल्प को दोहराया भी है।

लोकसभा में संशोधन विधेयक प्रस्तुत करते हुए प्रधानमंत्री ने कहा कि संसद में विधेयक के पारित होने के बाद राज्यों की विधान सभाओं की एक साल के अंदर नयी व्यवस्था को कानून की शक्ल देनी होगी तथा जिन राज्यों में पंचायती राज का कार्यकाल पूरा नहीं हुआ है, उन्हें इसे पूरा करने का अवसर दिया जाएगा।

जैसा कि हमने पहले बताया है कि हमारे देश में पंचायती राज की शुरूआत 1959 में हुई। 1960 में सहकारी आंदोलन शुरू किया गया, जिसके परिणामस्वरूप लगभग दो लाख सहकारी समितियों का जाल पूरे देश में फैल गया। यह कटु सत्य है कि पंडित जवाहरलाल नेहरू के बाद राजनीतिक एवं संविधानिक संरक्षण के अभाव में, सत्ता बहुत तेजी से पंचायत-घरों से खिसक कर बहुत दूर राज्यों की राजधानियों और देश की राजधानी में केंद्रित हो गई। गांवों के करोड़ों लोगों को सत्ता में भागीदार बनाने का स्वप्न इसी कारण टूटा है। ऊपर-ऊपर तो ढांचा खड़ा होता गया लेकिन उसकी बुनियाद कमजोर होती गई।

पंचायतों के अधिकार और दायित्व

फिलहाल हमारी पंचायतों के पास पर्याप्त अधिकार नहीं हैं। न ही कोई साधन है और कोई निश्चित दायित्व भी नहीं है। कुछ राज्यों में कई-कई साल पंचायतों के चुनाव नहीं होते हैं। यदि किसी पंचायत को किसी कारण भंग कर दिया जाता है तो उसे पुनः गठित करने का प्रयास नहीं किया जाता है। पंचायतों में कुछ जातियों और प्रभावी लोगों का आधिपत्य है तथा अनुसूचित जातियों, जनजातियों और महिलाओं का प्रतिनिधित्व नाममात्र ही है।

संविधान के 40वें अनुच्छेद में यद्यपि पंचायतों को ऐसे अधिकार और शक्ति देने का नीति-निर्देश हैं जिससे वे स्व-शासन की इकाइयों के रूप में सुचारू ढंग से काम कर सकें, परन्तु कोई व्यापक व्यवस्था संविधान में नहीं है। 64वें संविधान संशोधन विधेयक के जरिए केन्द्रीय सरकार संविधान में पंचायतों के संबंध में एक नया अध्याय जोड़ना चाहती है।

विधेयक में यह प्रावधान किया गया है कि 20 लाख से अधिक आबादी वाले सभी राज्यों में ग्राम, ब्लॉक तथा जिला स्तर पर तीन-स्तरीय पंचायतें स्थापित की जाएं। यह दायित्व राज्य सरकारों का होगा।

विधेयक की दूसरी महत्वपूर्ण व्यवस्था है कि चुनाव आयोग की देखरेख में सभी स्तरों की पंचायतों के लिए सीधे चुनाव कराए जाएंगे। पंचायतों का कार्यकाल पांच वर्ष होगा। यदि अपने कार्यकाल से पूर्व किसी पंचायत को भंग किया गया तो छह महीने के भीतर पुनः चुनाव करा कर शेष अवधि के लिए पंचायत का पुनः गठन करना होगा। ऐसा अनुमान है कि पंचायतों के लिए चुनाव में लगभग 50 लाख व्यक्ति उम्मीदवार के रूप में भाग लेंगे और उनमें से 7-8 लाख प्रतिनिधि चुने जाएंगे। इस तरह ग्रामीण क्षेत्रों में राजनीतिक प्रतिभा, चेतना और नेतृत्व का व्यापक उपयोग हो सकेगा। आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय की योजनाएं तैयार करने और उन पर अमल करने का अधिकार और दायित्व भी पंचायतों को देने का प्रस्ताव किया गया है।

पंचायतों के लिए पर्याप्त धन उपलब्ध हो इसके लिए राज्य सरकारों पर यह दायित्व डाला गया है कि वे राज्य के समन्वित कोष से पंचायतों को कर शुल्क और चुंगी लगाने तथा उसे वसूल करने का अधिकार भी प्रदान करें। पंचायतों की आर्थिक स्थिति की समीक्षा करने के लिए राज्यों में हर पांच वर्ष में वित्त आयोग गठित किया जाए। पंचायतों के आय व्यय की जांच और समीक्षा भारत के कंप्ट्रोलर और आडिटर जनरल द्वारा कराने की व्यवस्था की जाए। पंचायतों में इस क्षेत्र की आबादी के अनुपात में अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लिए आरक्षण अनिवार्य कर देने का प्रस्ताव है। महिलाओं के लिए भी 30 प्रतिशत सीटें आरक्षित करने की व्यवस्था की गई है।

संविधान (संशोधन) विधेयक रखते हुए प्रधानमंत्री ने राज्यों को आश्वस्त करने का प्रयास किया है कि पंचायतों को अधिक अधिकार देने के लिए उन पर दायित्व डालने के साथ केन्द्रीय सरकार ने स्वयं भी उतने ही दायित्व अपने ऊपर लिये हैं। इसमें संदेह नहीं है कि पहली बार पंचायतों को संविधान के अंतर्गत इतने व्यापक अधिकार और साथ ही दायित्व देने की व्यवस्था की जा रही है।

डी–197, मोती बाग–1
नई दिल्ली

लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की दिशा में ऐतिहासिक क्रांतिकारी कदम : एक निष्पक्ष विश्लेषण

लादू सिंह चौहान

लोकसभा में प्रधानमंत्री द्वारा पेश किया गया 64 वां संवैधानिक संशोधन विधेयक लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की दिशा में एक ऐतिहासिक क्रांतिकारी कदम कहा जा सकता है जिस पर खुली चर्चा होने की आवश्यकता है। सदन में पेश किये गये इस विधेयक में पंचायतों की परिभाषा, उनका गठन, कार्यकाल, आरक्षण, अधिकारों व उत्तरदायित्वों आदि का विस्तृत प्रावधान किया गया है।

पचास के दशक से ही देश में पंचायती राज व्यवस्था पर बल दिया गया था जिसके पीछे यह आदर्श था कि सत्ता जनता के हाथों में रहे। एक धारणा यह भी थी कि भारत एक बहुत बड़ा देश है और इस कारण विकास के कार्य मात्र सरकार नहीं चला सकती। पंचायती संस्थाएं जनता के करीब होने से विकास की प्रक्रिया में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती हैं। लेकिन अब तक पंचायती राज संस्थाओं की कई कमजोरियां और असफलताएं रही हैं। आर्थिक व सामाजिक दृष्टि से प्रभावशाली लोग इन संस्थाओं में हावी रहे हैं। राजनीतिक दखल, प्रशासनिक अकुशलता, नियमों की अवमानना व स्वार्थी हितों के शक्तिशाली होने से कमजोर वर्गों को पंचायती राज का लाभ नहीं मिल सका है।

पंचायती राज व्यवस्था की कमजोरियों व असफलताओं को दूर करने की दिशा में प्रस्तावित 64 वां संवैधानिक संशोधन ऐतिहासिक क्रांतिकारी कदम है। चूंकि पंचायती राज पर लाया गया यह विधेयक आम लोगों की चर्चा का विषय है अतः निम्न बिन्दुओं के संदर्भ में इसका निष्पक्ष विश्लेषण आवश्यक है।

पंचायती राज संस्थाओं के नियमित चुनाव

विभिन्न राज्यों में अधिनियमों द्वारा पंचायत चुनावों की अवधि 3 से 5 वर्ष निर्धारित की गयी है। इन संस्थाओं को पुनर्जीवित करने के लिए आवश्यक है कि नियत समय पर चुनाव होते रहें। चुनाव लोकतंत्र की बुनियाद है। लेकिन पिछला अनुभव यह बतलाता है कि कानूनी प्रावधानों के बावजूद पंचायती राज संस्थाओं के चुनाव नियमित समय पर नहीं हुए हैं। निहित स्वार्थों के कारण उनकी मियाद आगे बढ़ाई जाती रही है। कई राज्यों में तो 13 से 15 वर्षों तक चुनावों को टाला जाता रहा है। नियमित चुनावों का अच्छा रिकार्ड गुजरात और महाराष्ट्र राज्यों का माना जाता है जहां कांग्रेस शासित सरकारें हैं। लेकिन हाल के वर्षों में कुछ विपक्षी सरकारों वाले राज्यों में भी नियमित चुनाव करवाये गये हैं जिनमें पश्चिम बंगाल, आंध्रप्रदेश व कर्नाटक राज्य शामिल हैं। भारत के उत्तरी राज्यों जहां कांग्रेस की सरकारें हैं वर्षों तक पंचायत चुनावों को टाला जाता रहा है। प्रस्तावित 64 वें संशोधन विधेयक में नियमित पंचवर्षीय चुनावों को संविधान का अंग बनाने का प्रावधान किया गया है। इससे पंचायत संस्थाओं को एक निश्चित दिशा मिलेगी। प्रजातांत्रिक संस्थाओं के विकास की दिशा में यह एक बुनियादी कदम है।

पंचायत के सभी स्तरों पर प्रत्यक्ष निर्वाचन का प्रावधान

विधेयक में त्रिस्तरीय पंचायती राज व्यवस्था यथा ग्राम स्तर, ब्लाक स्तर व जिला स्तर पर कायम करने का प्रावधान है और सभी स्तरों पर पंचायत के सभी स्थान प्रत्यक्ष निर्वाचन से भरने का उपबन्ध किया गया है। वर्तमान में कई राज्यों में पंचायती राज की उच्च स्तरीय संस्थाओं में अप्रत्यक्ष निर्वाचन की पद्धति विद्यमान है जो काफी सफलतापूर्वक कार्य कर रही है। सभी स्तरों पर पंचायत के सभी स्थान प्रत्यक्ष निर्वाचन से भरे जाने में कई प्रकार की दिक्कतों का सामना करना पड़ सकता है। अतः इस मुद्दे पर फिर से विचार किया जाना चाहिये व इस संदर्भ में पश्चिम बंगाल तथा राजस्थान में परम्परागत रूप से कार्य कर रही व्यवस्था पर गंभीरतापूर्वक विचार किया जाना चाहिये जहां ग्राम पंचायत के अध्यक्ष स्वतः ब्लाक स्तर पर पंचायत समिति के सदस्य व पंचायत समितियों के अध्यक्ष स्वतः ही जिला परिषद के

सदस्य बन जाते हैं। महात्मा गांधी ने भी उच्च स्तर की पंचायत संस्थाओं की सफलता के लिए अप्रत्यक्ष निर्वाचन पर बल दिया था। अतः उच्च स्तर पर इन संस्थाओं में अप्रत्यक्ष चुनाव पद्धति को जारी रखा जाना चाहिये।

उपबन्धों का कुछ राज्यों व क्षेत्रों पर लागू न होना

देश के कुछ पूर्वोत्तर राज्यों और जनजातीय क्षेत्रों को विधेयक के उपबन्धों से बाहर रखा गया है। ये राज्य हैं- नगालैण्ड, मेघालय और मिजोरम जहां पंचायती राज से मिलते जुलते ग्रामीण प्रशासन की परम्परा विद्यमान है। मणिपुर के पर्वतीय क्षेत्र जहां जिला परिषदें हैं, पश्चिम बंगाल राज्य के दार्जिलिंग जिले के तीन सब डिवीजनों दार्जिलिंग, कुर्सियोंग व कलिम्पोंग जिनके लिए गोरखा पर्वतीय परिषद विद्यमान है। त्रिपुरा में ऐसे क्षेत्र जहां स्वायत्त जिला परिषदें विद्यमान हैं, अधिनियम के प्रावधान लागू नहीं होंगे। विधेयक के उपबन्धों में इन राज्यों व क्षेत्रों का अपवर्जन न्यायोचित नहीं कहा जा सकता। अच्छा यह होता कि दलगत राजनीति से दूर रहकर देश के पंचायती राज में एकरूपता कायम की जाती।

आर्थिक और राजनैतिक सत्ता का विकेन्द्रीकरण

पंचायती राज संस्थाओं को और अधिकार दिये जाने के उद्देश्य से प्रस्तावित विधेयक में 11 वीं अनुसूची जोड़ी गयी है। इसमें 29 विषयों को शामिल किया गया है जिनमें सार्वजनिक वितरण प्रणाली, जनता के कमजोर वर्गों का कल्याण, ग्रामीण विद्युतीकरण जिसके अन्तर्गत विद्युत का वितरण जैसे महत्वपूर्ण विषय शामिल किये गये हैं जो पंचायती राज को अधिक सक्षमता प्रदान करेंगे। वित्तीय दृष्टि से पंचायतों को ठोस बनाने तथा प्रत्येक पांच वर्षों में वित्त आयोग की नियुक्ति के प्रावधान पंचायती राज संस्थाओं को मजबूत आधार प्रदान करेंगे क्योंकि केवल अधिकार देने का तब तक कोई मतलब नहीं होगा जब तक पंचायतें वित्तीय दृष्टि से दुर्बल होंगी। पंचायतों को सौंपी गयी जिम्मेदारी पूरी न कर पाने की दशा में कोई प्रावधान निश्चित किये जाने की आवश्यकता है। केन्द्र, राज्य व स्थानीय स्तर पर समग्र रूप से कार्यों, अधिकारों व उत्तरदायित्वों पर पुनर्विचार किया जाना चाहिए, क्योंकि केन्द्र ने राज्यों को सौंपे जाने तथा केन्द्र, राज्य व स्थानीय स्तर पर कार्यों व अधिकारों के वितरण में न्यायोचित दृष्टिकोण अपनाये जाने की आवश्यकता है। लेकिन सत्ता का विकेन्द्रीकरण सबसे पहले केन्द्र से राज्यों व तत्पश्चात राज्यों से स्थानीय स्तरों पर किया जाना चाहिये।

राज्यपाल की भूमिका

प्रारम्भ में यह संदेह प्रकट किया जा रहा था कि पंचायती राज में राज्यपाल की भूमिका क्या होगी, यह इसलिए महत्वपूर्ण हो गया था क्योंकि राज्यपालों ने कई बार मंत्री परिषद की सलाह के बगैर निर्णय किये हैं जिनसे वे विवादों के कटघरों में खड़े हो चुके हैं। लेकिन प्रस्तावित विधेयक में इस प्रकार का कोई भी शक-शुबहा नहीं छोड़ा गया है। विधेयक में यह स्पष्ट कर दिया गया है कि राज्यों की विधान सभाएं उन आधारों को तय करेंगी जिन्हें देखकर ही राज्यपाल पंचायतों को भंग या निलम्बित कर सकेंगे। अतः अब स्पष्ट हो गया है कि इस मामले में राज्यपाल मंत्री परिषद के परामर्श से ही कार्य करेगा। इस बात का विशेष ध्यान रखे जाने की आवश्यकता है कि किन्हीं भी परिस्थितियों में राज्य सरकारों की उपेक्षा कर केन्द्र को सीधे ही पंचायती राज को निर्देशित नहीं किया जाये।

आरक्षण व्यवस्था

प्रस्तावित विधेयक में अनुसूचित जाति व जनजाति के लोगों के लिए आरक्षण की व्यवस्था का भी प्रावधान किया गया है। यद्यपि कई राज्यों में पंचायत संस्थाओं में आरक्षण की व्यवस्था प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष निर्वाचन द्वारा अभी विद्यमान है परन्तु यह पर्याप्त नहीं कहीं जा सकती क्योंकि सरकार द्वारा इन जातियों के उत्थान के लिए कई कार्यक्रम चलाये जाते हैं। लेकिन पंचायतों में इन जातियों का समुचित प्रतिनिधित्व नहीं होने से विकास का लाभ इन लोगों को नहीं मिल पाता। कई जगह पंचायतें सिर्फ सामन्तों की कठपुतली मात्र बनकर रह गयी हैं। देश के कई भागों का अनुभव बतलाता है कि कुछ ही लोगों ने पंचायतों पर कब्जा कर ऐसे लोगों का शोषण किया है। लेकिन अब लोक सभा और विधान सभाओं की भांति पंचायती राज संस्थाओं में इन जातियों के आरक्षण की व्यवस्था कर दिये जाने से विकास कार्यक्रमों में ये अपनी भागीदारी निभा सकेंगी।

जैसा कि प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी कई बार दोहराते रहे हैं कि हमें देखना है कि महिलाओं को किस तरह ऊपर उठाया जाये। इसी संदर्भ में उनके द्वारा एक नया आविष्कार पंचायत संस्थाओं में महिलाओं को 30 प्रतिशत आरक्षण देकर किया गया है जिसका सभी पक्षों द्वारा स्वागत किया जाना चाहिए। पंचायत के सभी स्तरों पर 30 प्रतिशत सीटें

का आरक्षण महिलाओं के लिए किया जाना भारत जैसे विकासशील देश के लिए बहुत फायदेमंद साबित होगा क्योंकि इस देश में अब तक महिलाओं की उपेक्षा होती रही है तथा उनका दर्जा पुरुष से नीचा समझा जाता रहा है जब कि देश की संस्कृति एवं परम्पराओं का पोषण तथा हमारी सभ्यता के मूल्यों और आदर्शों को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी के हाथों में सौंपने का कार्य महिलाएं ही करती रही हैं। यद्यपि ग्रामीण महिलाओं में अभी भी रूढ़ीवादिता व्याप्त है लेकिन संस्थाओं में आने के बाद वे बाहरी दुनिया के सम्पर्क में आयेंगी तथा उनके विचारों में निश्चित रूप से नवीनता व जागरूकता आयेगी। पंचायतों में महिलाओं की मौजूदगी से पंचायतें अधिक प्रतिनिधि, ज्यादा ईमानदार, चुस्त और जिम्मेदार बनेगी ऐसी आशा की जा सकती है।

विधेयक के लाभदायक परिणाम

प्रस्तावित विधेयक से सभी स्तरों पर प्रत्यक्ष निर्वाचन से सत्ता के दलालों का खात्मा हो जायेगा और लोकतंत्र निचले स्तर पर जनता के पास पहुंचेगा। अभी तक कुछ हजार लोग ही देश की 80 करोड़ जनता का प्रतिनिधित्व करते रहे हैं। लेकिन अब यह विधेयक लोकतांत्रिक संस्थाओं में लगभग 7 लाख लोगों की भागीदारी के दरवाजे खोल देगा। देश के नेता जिनका जनता से सीधा सम्पर्क कट गया था फिर से निचले स्तर पर जनता के निकट सम्पर्क में आने पर मजबूर होंगे। अधिक आर्थिक और राजनीतिक अधिकार मिल जाने पर पंचायती राज संस्थाएं देश की राजनीति को पूरी तरह से प्रभावित करने में सक्षम होंगी। अतः सत्ता के विकेन्द्रीकरण की दिशा में यह विधेयक आधारभूत कदम है। इसे ईमानदारी के साथ लागू किये जाने की आवश्यकता है।

राजनीति विज्ञान विभाग
राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर
302004

विकास गीत

सतपाल

विकास का अर्थ हो समानता।
इसी में समाज की महानता।।

अवसर विकास के समान मिलें।
सब के आंगन में फूल खिलें।।
सब का सुखकर हो रास्ता।
विकास का अर्थ हो समानता।।

कृषि तो आधार है समाज का।
आधुनिक हो कृषि तंत्र आज का।।
भागने दो रूढ़िवादी दासता।
विकास का अर्थ हो समानता।।

गांव का उत्थान ही निर्माण है।
गांव के कल्याण में कल्याण है।।
गरीबी की रेखा हो लापता।
विकास का अर्थ हो समानता।।

विकास का अर्थ हो समानता।
इसी में समाज की महानता।।

18/3 बी, पेशवा मार्ग
गोल मार्किट, नई दिल्ली

पंचायती राज और ग्रामीण विकास

डी.एस. नगरकोटी,
डा. कैलाश जोशी

भारत गांवों का देश है। 1981 की जनगणना के अनुसार देश की 76 प्रतिशत जनसंख्या 576000 गांवों में निवास करती है। इसलिए यह सत्य है कि देश के विकास के लिए ग्राम विकास प्रथम आवश्यकता है।

पंडित जवाहर लाल नेहरू ने 15 अप्रैल, 1959 को मदुरई में कहा था, "हमारे गांवों में 80 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या रहती है, भारत गरीब इसलिए है क्योंकि उसके गांव निर्धन हैं। अगर गांव धनी हो जाएं तो देश भी अमीर हो जायेगा, इसलिए देश की प्रमुख समस्या गांवों से गरीबी दूर करने की है। इसके लिए देश के अनेक भागों में कुछ वर्ष पहले जमींदारी और जागीरदारी प्रथाओं को समाप्त किया गया क्योंकि भूस्वामित्व की अर्धसामन्ती प्रथा के रहते गांव प्रगति नहीं कर सकते। यही काफी नहीं है, हमें और आगे बढ़ना है, पंचायतों को और अधिक अधिकार दिये जाएं क्योंकि हम चाहते हैं कि प्रत्येक ग्रामीण को उसके गांव में वास्तविक स्वराज का अनुभव हो, उसके हाथ में सत्ता हो और उसे हर चीज के लिए बड़े अधिकारियों के पास न दौड़ना पड़े। हम चाहते हैं कि गांवों के कार्यकलापों में अधिकारी अधिक दखल न दें। हम स्वराज गांवों से ही शुरू करना चाहते हैं।" और इस आत्मनिर्भर ग्रामीण अर्थव्यवस्था की अवधारणा को साकार करने के लिए नेहरूजी ने पंचायती राज व्यवस्था की ज्योति प्रज्वलित की थी, जिसे उनकी मृत्यु के बाद लगभग भुला ही दिया गया। लेकिन आज नेहरू जन्म शताब्दी वर्ष से देश में फिर से पंचायती राज के पुनर्जागरण पर एक सार्थक बहस चली है।

हमारे देश में प्राचीन काल से ही पंचायतें गांवों के सामुदायिक जीवन की संरक्षक थीं। पंच गांव के लोगों द्वारा मनोनीत होते थे या निर्वाचित किये जाते थे और गांव की सभी आर्थिक, सामाजिक गतिविधियों के मार्ग दर्शक होते थे। वे समुदाय के लोगों के किसी भी विवाद का फैसला करने के लिए न्यायिक ट्रिब्यूनल भी हुआ करते थे। इस प्रकार वैदिक काल से लेकर ब्रिटिश काल के आरम्भ तक ये पंचायतें ग्रामीणों के जीवन को सब प्रकार से नियंत्रित करती थीं और ग्रामीण अर्थव्यवस्था पूर्णतया आत्मनिर्भर मानी जाती थी। परन्तु अंग्रेजी शासन में पंचायत संस्थाओं को गहरा आघात लगा।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद राष्ट्रीय सरकार ने गरीबी की बुनियादी समस्या हल करने तथा ग्रामीणों की सर्जनात्मक प्रतिभा का विकास करने के उद्देश्य से ग्रामीण विकास के अनेक कार्यक्रम शुरू किये, लेकिन इन कार्यक्रमों से ग्रामीण जनता के उत्थान में आशातीत सफलता नहीं मिली, जिसका कारण ग्रामीण संस्थाओं के ढांचे और अधिकारों के बारे में कोई विशिष्ट संवैधानिक प्रावधान का न होना था। दो अक्तूबर 1952 से सामुदायिक विकास कार्यक्रम आरम्भ हुआ जिसके प्रबन्ध स्तर पर गांव वालों की प्रत्यक्ष भागीदारी के लिए गांव स्तर पर पंचायत, विकास खण्ड स्तर पर पंचायत समिति एवं जिला स्तर पर जिला परिषदों की स्थापना का प्रावधान रखा गया। इसी क्रम में 1957 में बलवन्त राय मेहता समिति गठित की गयी। इसके सुझावों के आधार पर पंचायती राज व्यवस्था की स्थापना देश में सर्वप्रथम राजस्थान में की गयी, जहां दो अक्तूबर 1959 को नागौर में पंडित नेहरू ने पंचायती राज का दीप प्रज्वलित किया और आन्ध्र प्रदेश, महाराष्ट्र से होते हुए पूरे देश में फैल गई। अपने प्रारम्भिक दौर से जिस लोकप्रियता से लोगों ने इसे अपनाया, इन लोकतांत्रिक संस्थाओं में नेहरूजी की मृत्यु के साथ ही पंचायती राज व्यवस्था में भी ठहराव आ गया। जो सन् 1969 तक बना रहा और फिर 1969 से 1977 तक इसके पतन का समय रहा। इस बीच गुजरात एवं महाराष्ट्र में ही अपवाद के तौर पर ये संस्थायें बनी रहीं। 1977 में पंचायती राज व्यवस्था के विकास के लिए गठित अशोक मेहता समिति ने इन संस्थाओं को पुनः सक्रिय बनाने के लिए महत्वपूर्ण सुझाव दिये। इसके बावजूद पंचायती राज संस्थायें 1977 से 1987 तक उपेक्षित रहीं। यही कारण है कि खरबों रुपया ग्रामीण विकास कार्यक्रमों में खर्च करने के बाद भी गरीबी का अन्धकार मिटाया नहीं जा सका और न ही ग्रामीण विकास

कार्यक्रमों के आशातीत परिणाम प्राप्त हुए।

पांचवीं पंचवर्षीय योजना शुरू होने के बाद सरकार ने गरीबी कम करने के लिए अनेक ग्रामीण विकास योजनाएं चलायी, जैसे पर्वतीय क्षेत्र विकास कार्यक्रम, मरूभूमि विकास, विशेष पशु प्रजनन, काम के बदले अनाज, स्वतः रोजगार, समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम, नया बीस सूत्री कार्यक्रम तथा ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं और बच्चों का विकास आदि कार्यक्रम।

यद्यपि इन कार्यक्रमों का सम्पूर्ण देश में लाभार्थियों को गरीबी की रेखा के ऊपर उठाने में महत्वपूर्ण योगदान रहा है तथापि लाभार्थियों के चुनाव की प्रक्रिया असन्तोषजनक पाई गयी। जिससे कार्यक्रमों में अपात्र लाभार्थियों का प्रतिशत अधिक रहा और 29 प्रतिशत लाभार्थियों को सम्बन्धित अधिकारियों तथा कर्मचारियों द्वारा हतोत्साहित किया गया जिसका कारण स्पष्ट है कि गांव वासियों की प्रबन्ध स्तर पर पूर्ण रूप से इन कार्यक्रमों में शामिल नहीं किया गया। इसके विपरीत अनेक अध्ययनों में यह भी पाया गया कि जिन राज्यों में पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से ग्रामीणों को विकास कार्यक्रमों में प्रत्यक्ष रूप से शामिल किया था वहां इन कार्यक्रमों का गरीबी को कम करने में विशेष महत्व रहा है।

जिन राज्यों में ग्रामीण विकास कार्यक्रमों की देखरेख और लागू एवं तैयार करने में पंचायतों की प्रत्यक्ष भागीदारी रही है वहां विकास कार्यक्रमों में बेहतर ताल-मेल रहा है, और उन राज्यों में इन कार्यक्रमों का गरीबी कम करने में महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

योजना आयोग के मूल्यांकन संगठन ने भी अपनी अन्तिम रिपोर्ट में कहा है कि कार्यक्रम तैयार करने एवं लागू करने में पंचायतों को शामिल करने से पश्चिम बंगाल में इन कार्यक्रमों की उपलब्धि महत्वपूर्ण रही है। 1987 में नाबार्ड ने समन्वित ग्रामीण विकास योजना लागू करने का नमूना सर्वेक्षण देश के पन्द्रह राज्यों में किया था, जिसकी रिपोर्ट से पता चला है कि पश्चिम बंगाल के जिलों में कोई भी अपात्र लाभार्थी कार्यक्रम में शामिल नहीं किया गया। अध्ययन में कहा गया है कि गरीब परिवारों का पता लगाने के लिए बैंक और पंचायतों को शामिल करके कार्यक्रम को वास्तविक जरूरतमन्द लोगों तक पहुंचाया जा सकता है। इसी प्रकार भारतीय रिर्जव बैंक अध्ययन 1984, वित्त प्रबन्ध एवं अनुसंधान संस्थान अध्ययन 1984, ग्रामीण विकास विभाग अध्ययन 1986-87, जिनमें सम्पूर्ण देश को शामिल किया गया है, में भी यही निष्कर्ष निकलता है कि कार्यक्रम तैयार करने एवं लागू करने के साथ ही प्रबन्ध स्तर पर ग्रामीण संस्थाओं की भागीदारी न होने के कारण अपात्र लाभार्थी का चुनाव, ऋणों की असन्तोषजनक वापसी, 22 प्रतिशत परिसम्पतियों से कोई लाभ न होना, अपर्याप्त तालमेल, फील्ड स्टाफ का अभाव, निर्धारित मानदण्डों के पालन का अभाव, परिसम्पतियों की आपूर्ति एवं रखरखाव में अनियमितताओं आदि पर प्रकाश डाला है। अभी कुछ समय पूर्व नेहरू जन्म शताब्दी वर्ष में अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के महाधिवेशन में कांग्रेस अध्यक्ष की हैसियत से प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी ने कहा, "विकास योजनाओं के लिए दिये गये प्रत्येक सौ रुपये में से 15 रुपये ही लोगों तक पहुंचते हैं, क्योंकि यह राशि बहुत से लोगों के जरिये वहां तक पहुंचती है जबकि सरकार लोगों की पूरी मदद करना चाहती है। वह जिलाधीश को फिर से वे अधिकार देना चाहते हैं जो प्राचीन समय में उसे प्राप्त थे।" श्री गांधी ने आगे कहा, "भूमि सम्बन्धी सभी बुनियादी समस्याओं का हल पंचायती राज के बारे में संविधान में संशोधन करने से हो जायेगा।" उन्होंने योजना के विकेन्द्रीकरण पर जोर देते हुए कहा, "हम यह नहीं कहते कि अगर योजना की जड़ें गांव में व सबसे गरीब लोगों के घरों में नहीं हैं तो योजना प्रभावकारी हो पायेगी।"

यह सत्य है क्योंकि लोग ही सबसे अच्छी तरह जानते हैं कि उनकी समस्यायें क्या हैं, उनकी प्राथमिकताएं क्या हैं, और इन समस्याओं का उनकी आवश्यकता के अनुरूप सबसे अच्छा समाधान क्या हो सकता है। परन्तु इसके लिए आधुनिक प्रौद्योगिकी और वैज्ञानिक विकास के युग में पंचायतों को इकाई मानते हुए जिला स्तर पर सभी उपभोक्ता वस्तुओं का उत्पादन करने के लिए लघु औद्योगिक इकाइयों की स्थापना करनी होगी। इन उत्पादक उद्देश्यों के लिए रोजगार उपलब्ध कराकर मांग पैदा करनी होगी। इस प्रकार ग्रामीणों के लिए आर्थिक बाजार तैयार करना होगा और कृषि क्षेत्र में भूमि के समान वितरण पर जोर देना होगा जिससे आठवीं पंचवर्षीय योजना में आत्मनिर्भर ग्रामीण, अर्थव्यवस्था की धारणा को साकार रूप दिया जा सके।

गिरि विकास अध्ययन संस्थान,
सेक्टर 'ओ', अलीगंज, लखनऊ

ग्रामीण विकास में पंचायती राज की भूमिका

एस.आर.कमल

ग्रामीण विकास में गांव के बहुमुखी विकास की योजनायें बनाई गईं। ग्रामीण विकास की रीढ़ कृषि को सर्वोच्च प्राथमिकता देते हुए पशुधन विकास, ग्रामीण उद्योग का विकास, सहकारिता विकास, शिक्षा व प्रौढ़ शिक्षा का प्रसार, जनस्वास्थ्य एवं सफाई सुधार, अछूत उद्धार एवं सामाजिक चेतना की जाग्रति आदि योजनायें चलाई गईं। इनके कार्यान्वयन में पंचायती राज की प्रथम कड़ी पंचायतों को प्रारम्भ से ही जोड़ दिया गया।

स्वतन्त्रता से पूर्व

पंचायतों का अस्तित्व अति प्राचीन है। प्राचीन काल में इनकी मान्यता इतनी अधिक थी कि राजा-महाराजा, पंच-सरपंच आदि पारस्परिक विवादों का निर्णय पंचायतों के द्वारा ही करते थे। ब्रिटिश शासन की 'फूट डालो और शासन करो' की नीति ने इन पर तुषारापात किया। पंचायतों के कार्यक्षेत्र में हस्तक्षेप करके इनके विधायिका, न्याय तथा शासन सम्बन्धी अधिकार छीन लिये। परिणामतः पंचायतें अस्तित्वहीन हो गईं। आर्थिक, न्याय, शिक्षा, स्वास्थ्य और आधुनिक परिवहन आदि की सुविधाओं से ग्रामीण अंचल वंचित होता गया।

स्वतन्त्रता उपरान्त

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात स्थानीय स्वायत्त शासन और जनतंत्रीय विकेन्द्रीकरण पर विशेष बल दिया गया। पंचायतों को पुनर्जीवित किया गया। देश में पंचायती राज लाने के लिए संविधान के अनुच्छेद 40 के अन्तर्गत पंचायतों की स्थापना की गई। सर्वप्रथम उत्तर प्रदेश में 1947 में पंचायती राज अधिनियम पारित करके पंचायतों की स्थापना की गई। 2 अक्तूबर 1952 में सामुदायिक विकास कार्यक्रम प्रारम्भ किया गया और बाद में प्रसार सेवा क्षेत्र खोले गये। 1957 में श्री बलवन्तराय मेहता की अध्यक्षता में एक समिति का गठन किया गया। 12 जनवरी 1959 को राष्ट्रीय विकास परिषद की बैठक में समिति की संस्तुतियों का अनुमोदन किया गया। फलतः 2-10-59 को पंचायती राज की व्यवस्था की गई। सर्वप्रथम राजस्थान की सरकार ने 2 अक्तूबर 1959 को तत्कालीन प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरू से नागौर में पंचायती राज व्यवस्था का उद्घाटन कराकर त्रिस्तरीय ढांचा प्रारम्भ किया। 1959 में आन्ध्र प्रदेश, 1960 में असम, मद्रास और मैसूर, 1961 में उड़ीसा, पंजाब और उत्तर प्रदेश, 1962 में महाराष्ट्र, 1963 में गुजरात और 1964 में प. बंगाल और बिहार द्वारा यह प्रणाली प्रारम्भ की गई।

इस व्यवस्था के अन्तर्गत ग्राम सभा, गांव पंचायत, न्याय पंचायत के अतिरिक्त जिला परिषद और क्षेत्र समिति को भी जोड़ दिया गया। गांव स्तर पर पंचायत, विकास खण्ड स्तर पर क्षेत्र समिति और जिला स्तर पर जिला परिषद को ग्रामीण विकास के लिये उत्तरदायी बनाया गया। कृषि विकास, पशुधन विकास, स्थानीय उद्योगों का सम्वर्द्धन, सार्वजनिक स्वास्थ्य कल्याण, सहकारिता विकास, कच्ची पक्की सड़कों का निर्माण व संरक्षण, प्राथमिक शिक्षा व शिक्षा संस्थाओं का प्रबन्ध, निर्बल वर्ग की सहायता, राष्ट्रीय बचत, वृक्षारोपण, आंकड़ों का संग्रह, रोशनी प्रबन्ध, चरागाह व भूमि प्रबन्ध आदि विकास कार्यों में ये संस्थायें संलग्न हो गईं। इसके अतिरिक्त प्राथमिक पाठशाला भवन, पंचायत घर, चिकित्सालय, औषधालय, शिशु कल्याण केन्द्र, पशु चिकित्सालय, बीज भण्डार और वितरण केन्द्र के लिये पंचायतों ने केवल अपनी भूमि ही नहीं अपितु अपने सीमित धन से व जनता से दान एकत्रित करके इनके निर्माण में भूमिका निभाई।

लोगों में एकता, आत्मविश्वास, आत्मसहायता उत्पन्न करने, राष्ट्रीय, सामाजिक एवं राजनीतिक चेतना जाग्रत करने एवं विश्वास के प्रति जागरूकता उत्पन्न करने में पंचायती राज संस्थाओं का इतना योगदान है कि लोग अपने कर्तव्य व उत्तरदायित्व को समझने लगे हैं। युवक दल, बालमंगल दल, महिला मण्डल और चर्चा मण्डल आदि को स्वैच्छिक संस्थाओं के रूप में खड़ा करने, उनमें विश्वास की

भावना भरने, स्थानीय नेतृत्व का विकास करने और उनको विकास कार्यों में जुटाने का श्रेय पंचायती राज संस्थाओं को ही है। इन स्वैच्छिक संस्थाओं को प्रजातन्त्र की प्रथम पाठशाला कहा जाये तो अतिश्योक्ति न होगी।

हरित क्रान्ति, श्वेत क्रान्ति, छूआछूत की भावना का विनाश, प्राचीन अंधरूढ़ियों से ऊपर उठकर मानव चेतना की जागृति करने आदि की सफलता में पंचायती राज संस्थाओं का ही योगदान है।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में

वर्तमान में समन्वित ग्रामीण विकास योजना, स्पेशल कम्पोनेन्ट प्लान, राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम, ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारण्टी कार्यक्रम, प्रौढ़ शिक्षा, ट्राईसेम योजना, सामाजिक वानिकी योजना, आवास की विभिन्न योजनायें, पुष्टाहार और महिला व उत्थान योजना आदि योजनाओं में लाभार्थी का चयन करने, योजना के संचालन हेतु समुचित स्थान देने, स्थानीय संसाधन जुटाने और योजनाओं को प्राथमिकता के आधार पर चयन करने, उनको कार्यान्वित करने आदि कार्यों में ये संस्थायें सउत्साह योग दे रहीं हैं। वर्तमान में मेघालय, नगालैण्ड, लक्ष्यद्वीप तथा मिजोरम को छोड़ कर सभी राज्यों में पंचायती राज संस्थायें विकास में जुड़ी हैं।

कमियां एवं सुझाव

इन संस्थाओं में कुछ कमियां हैं जिनको दूर करके इन्हें समाजोपयोगी, कुशल एवं अधिक सक्रिय बनाने हेतु सुधार अपेक्षित है:—

1. कुशल नेतृत्व का अभाव : गांव पंचायत के प्रधान, क्षेत्र प्रमुख व जिला परिषद अध्यक्ष जनतान्त्रिक मतदान प्रणाली से आते हैं। इनमें प्रशासन, योग्यता, अनुभव तकनीकी जानकारी और कुशल नेतृत्व का अभाव होता है। अतः प्रशिक्षण की व्यवस्था आवश्यक है।

2. समन्वय का अभाव : सरकारी कर्मचारी और गैर सरकारी लोगों में मतैक्य का अभाव होता है। परिणामतः कार्यक्षमता में कमी आती है अतः विकास कार्यों के प्रति इनमें समन्वय बैठाया जाये।

3. धन का अभाव : इन संस्थाओं की आर्थिक स्थिति अत्यन्त क्षीण है। प्रारम्भ में पर्याप्त वित्तीय साधन ग्रामीण क्षेत्र से प्राप्त होने की आशा थी परन्तु यथार्थ इसके विपरीत निकला। ये संस्थायें अपने अधिकार क्षेत्र के कर व अन्य देयों को, जनमत खराब होने के भय से वसूल करने में असमर्थ रहती हैं। संस्थाओं की भूमि पर उद्योग, सामाजिक वानिकी व अन्य स्रोतों से आय बढ़ाई जाये और शासन से भी धन प्राप्त हो।

4. दलबन्दी : सिद्धान्तः इन संस्थाओं के निर्वाचन राजनैतिक दलीय प्रणाली के आधार पर नहीं होते किन्तु व्यवहार इससे प्रेरित होने लगा है। इससे पारस्परिक झगड़े और भेदभाव का जन्म होता है। इस दूषित भावना का त्याग कर राष्ट्र हित की भावना को ग्रहण किया जाये।

5. शिक्षा का अभाव : श्री मैथिलीशरण गुप्त का कथन कितना सत्य है कि - "शिक्षा की यदि कमी न होती तो ये गांव स्वर्ग बन जाते" शिक्षा से व्यक्तित्व का विकास होता है किन्तु देश में केवल 36.23 प्रतिशत लोग ही शिक्षित हैं। शेष अशिक्षा के अंधकार में भटक रहे हैं। अतः शिक्षा का प्रसार आवश्यक है। "हर एक पढ़ा व्यक्ति एक अनपढ़ को पढ़ाने का संकल्प ले तो यह निरक्षरता का कलंक शीघ्र दूर हो सकता है।

6. पंचायत उद्योग : गांव, खण्ड व जिला स्तर पर पंचायत उद्योग की स्थापना की जाये। इन उद्योगों का तालमेल तीनों स्तरों पर इस प्रकार बैठाया जाये कि एक उद्योग का तैयार माल दूसरे उद्योग का कच्चा माल बन सके। इनसे ग्रामीण उद्योगों का प्रसार और जनता को रोजगार व प्रशिक्षण का अवसर प्राप्त होगा। बेरोजगारी दूर होगी।

7. जाति भेद व वर्ण भेद : जातिवाद व वर्गवाद के कारण ये संस्थायें सर्वमान्य हित से भटक जाती हैं। इस दूषित भावना से ऊपर उठकर मानव कल्याण की भावना से कार्य करना चाहिए।

8. समयानुसार निर्वाचन न होना : इन संस्थाओं के निर्वाचन समय पर नहीं होते। समयानुसार निर्वाचन न होने से लोगों में नीरसता और अकुशल नेतृत्व से अरुचि उत्पन्न हो जाती है। उत्तर प्रदेश पंचायतों के सामान्य निर्वाचन 1949 में होने के उपरान्त 1955, 1961, 1972, 1982 में सम्पन्न हुये और अब जून-जुलाई 1988 में सम्पन्न हुये हैं। लगभग यही स्थिति अन्य राज्यों की है। अतः निर्वाचन निर्धारित अवधि 5 वर्ष पर कराये जायें।

अन्य सुझाव

प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी गांव सभा से संसद तक जनता की भागीदारी पर बल देते हैं। अतः विकास का उत्तरदायित्व इन संस्थाओं को सौंपा जाये ताकि उनमें विकास के प्रति तीव्र इच्छा व लगन उत्पन्न हो सके। ग्रामीण विकास के लिये व्यष्टि स्तरीय नियोजन को सुदृढ़ और सक्रिय बनाया जाये।

स्वैच्छिक संस्थायें जैसे युवक दल आदि का विकास करके इनका सहयोग प्राप्त किया जाये। कुछ लोगों की धारणा है कि पंचायती राज संस्थाओं से कोई लाभ नहीं हुआ किन्तु अशोक मेहता समिति ने माना है कि इन संस्थाओं से कई दृष्टिकोणों में सफलता मिली है।

राजनीतिक दृष्टि से इन संस्थाओं ने नागरिकों को उनके अधिकारों के प्रति जागरूक करके भारतीय भूमि में लोकतंत्रात्मक प्रक्रिया के वृक्ष का बीज बोया है और आज इस वृक्ष की छाया गांव-गांव तथा घर-घर तक पहुंच रही है। प्रशासनिक दृष्टि से इस व्यवस्था ने अफसरशाही प्रबुद्ध वर्ग और आम जनता के बीच अन्तराल को कम किया है। सामयिक व सांस्कृतिक दृष्टि से इसे नेतृत्व को उभारा हैं जो केवल आयु से ही युवा नहीं अपितु विचार और नवीन दृष्टिकोण से आधुनिक है। विकास की दृष्टि से इसने ग्रामीण लोगों के मन में विकसित होने की मनोवैज्ञानिकता भरी है। आर्थिक दृष्टि से हरित क्रान्ति के चमत्कार से लहलहाते खेतों में उमंगें भरती फसलों ने खाद्यान्न में आत्मनिर्भरता की करवट ली है। रोजगार सर्जक योजनाओं से बढ़ती बेरोजगारी में पर्यवरोध लगा है। गरीबी उन्मूलक विभिन्न योजनाओं से आय में वृद्धि हुई है और जीवन स्तर ऊपर उठा है। गरीबी का प्रतिशत छठी योजना में 51 प्रतिशत से घट कर सातवीं योजना के प्रारम्भ में 36.9 प्रतिशत रह गया है। कृषि को जीविकोपार्जन के साधन मात्र से वाणिज्योन्मुख मोड़ देने का श्रेय इन पंचायती राज संस्थाओं को ही है।

प्रसार प्रशिक्षण अधिकारी
मैन पुरी (उ.प्र.)

जीवन चक्र

राखी कुमार

किसान का
जीवन क्या है
किसको मालूम
उसकी ज़िन्दगी क्या है
वह भी किसको मालूम
वह तो बस कर्म में लीन सोचता रहता है
जिस रास्ते पर चलते रहते हैं हम
अपना समय गुजारते रहते हैं हम
कोई रुक कर पूछता भी है

हम क्या हैं ?
कौन हैं ?
धरती पर क्या कर रहे हैं हम ?
क्यों हैं हम यहां ?
हमारा क्या महत्व है ?
यह सब तो हमारी जिन्दगी ही बता सकती है।
पर किसान की जिन्दगी ही क्या है ?
यह तो हवा, पानी और धरती ही बता सकती है।

बी 11/782 लोधी कालोनी,
नई दिल्ली 110003

ग्रामीण युवा संगठन और पंचायतें

पी.आर. घाटगे

युवा शब्द अपने आप में शौर्य, अदम्य साहस और स्फूर्ति चेतना का प्रतीक है। युवा मस्तिष्क में ऐसी विचारधाराओं का अजस्र स्रोत होता है, जिन्हें यदि सही दिशा निर्देश में उपयोग नहीं किया गया तो सोच विध्वंसात्मक हो जाती है और यदि समाज सापेक्ष सर्जना में प्रयुक्त किया गया तो सृजनात्मक हो जाती है। आज आवश्यकता इसी बात की है कि हमारे ग्रामीण युवकों को संगठित कर उन्हें एक सुनिश्चित दिशा बोध दिया जाए और समाज हित के कार्यों में उनकी संगठनात्मक शक्तियों का सही उपयोग किया जाए।

समाज अपने आप में एक वृहत्तर मानव समूह है। समाज की इकाई व्यक्ति है, जिनके थोड़े से समूह से किसी ग्राम का निर्माण होता है, और कुछ ग्रामों को मिलाकर एक पंचायत का गठन किया जाता है। जब हम ग्रामीण युवा संगठन की बात करते हैं तो उसका संदर्भ क्षेत्र एक वृहत्तर मानव समूह न होकर इन्हीं ग्राम पंचायतों के स्तर पर सामाजिक पुनरूत्थान से संबंधित होता है। आखिर पंचायतों से ही देश और विश्व सृजन की परिभाषा नियत होती है। भूमि से अधिक फसल लेने के लिए जैसे मैदान की मेड बंद कर छोटे-छोटे खेत बना दिये जाते है ठीक इसी अर्थ में ग्रामीण युवा संगठन को भी सामाजिक परिप्रेक्ष्य में देखा जाना चाहिए।

सामाजिक हित क्या है ? ग्रामीण सर्वांगीण विकास का नाम ही सामाजिक हित है। इन्हीं सामाजिक हितों की परिकल्पना को ग्रामीण पंचायतों के माध्यम से किये जाने की सोच को पंचायती राज में बल दिया जा रहा है। पंचायतों को अधिक अधिकार व शक्तियां प्रदान की जा रही हैं। लगभग 1/3 आबादी युवाओं की हैं तब पंचायती राज की सफलता में इनके योगदान और सक्रियता को सुनिश्चित किया जाना भी जरूरी है अन्यथा उपेक्षा की युवा सोच सामाजिक हित संसाधन में बाधक ही होगी।

कवि पंडित सूर्यकांत त्रिपाठी निराला ने कहा है :
"द्रूतझरों जगत के जीर्ण पत्र।"

आशय यही है – कि वृद्ध व कमजोर हाथों में ज्यादा दिनों तक आस्थाएं टिकी नहीं रह सकती हैं। अंततः नये कोपलों से ही नया निर्माण संभव है। रूढ़िगत वर्जनाओं से सामाजिक कोढ़ को ही बल मिलता है। समाज जड़ हो जाता है और तब सिर उठाती नयी, युवा मान्यताएं ही उनके सामाजिक परिवर्तन का कार्य करती हैं।

पंचायती राज से युवा संगठन से अर्थ है, 18 वर्ष की आयु से 35 वर्ष की आयु के युवा शक्तियों को एकत्रित कर उन्हें शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से ग्राम व समाज के समुचित विकास के कार्यक्रमों में उपयोग करना।

देश की जनसंख्या में लगभग एक तिहाई संख्या युवकों की है, यह पहले कहा जा चुका है–इसलिए इस बात पर जोर दिया जाना आवश्यक है कि प्रशासन तथा सार्वजनिक क्षेत्र में युवकों की सहभागिता को युक्ति युक्त अवसर दिया जाये। युवकों को उनकी शक्ति, विकास और सहभागिता के आधार पर विकास के लिए योजनाएं तैयार की जायें।

शासन ने खण्ड स्तरों पर युवा मंडलों का गठन किया है, जिसमें प्रत्येक पंचायत से एक-एक सदस्य का मनोनयन किया गया है। इन युवा मंडलों के माध्यम से युवक कल्याण गतिविधियों का क्रियान्वयन ग्रामीण क्षेत्रों में किया जाना चाहिए-ऐसा करने से उन नवयुवकों को एक नई दिशा व दृष्टि मिलेगी।

युवा गति विधियों को सुदृढ़ बनाने के लिए शासन स्तर पर अलग से खेल व युवक कल्याण विभाग संचालित है। युवा शक्तियों को बढ़ावा देना आवश्यक है – क्योंकि अंततः देश, राज्य, जिला व ग्राम की बागडोर उनके ही कंधों पर रखी जानी होगी, तो उसकी शुरूआत अभी से क्यों नहीं ? यदि इन्हें हर स्तर में अभी से ही सहभागी नहीं करेंगे तो निश्चित ही देश, समाज व गांव के नेतृत्व, योजना व विकास के लिए इन पीढ़ियों के पास कोई सुदृढ़ विकल्प शेष नहीं होगा।

युवा संगठनों में देश के कमजोर वर्ग जैसे आदिवासी,

हरिजनों को भी पर्याप्त प्रतिनिधित्व आरक्षण के माध्यम से दिया जाना चाहिए। एक बात स्पष्ट की जानी आवश्यक है कि युवा से अर्थ न केवल युवकों से है, बल्कि महिलाओं से भी है। अंततः पुरुष और महिला ही तो परिवार रूपी गाड़ी के दो चक्के हैं।

ग्रामीण युवा संगठनों के माध्यम से पंचायत क्षेत्रों में कार्यक्रमों को संचालित कराकर उनका विशिष्ट योगदान प्राप्त किया जा सकता है, वे इस प्रकार हो सकते हैं :-

1. अशिक्षित व अंगूठा छाप ग्रामीणों को समय निकालकर शिक्षात्मक कार्यक्रमों की महत्ता से अवगत कराते हुए उनकी निरक्षरता दूर करने से ग्रामीण युवा, संगठन महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह कर सकते हैं। ऐसे कार्यक्रमों को प्रोत्साहित करने के लिए शासन इन युवा संगठनों को उदारतापूर्वक मानदेय अथवा अनुदान देने पर भी विचार कर सकती है।

2. ग्राम सफाई व स्वच्छता को भी एक अभियान का रूप दिया जा सकता है। युवा संगठन सप्ताह या पखवाड़े में ग्राम की सारी गलियों को कूड़ा करकटों को साफ करने में बिना किसी शर्म या झिझक के जुड़ जाएं तो अच्छे परिणाम की आशा की जा सकती है।

3. सार्वजनिक परिसम्पत्तियों के निर्माण व संधारण में भी ग्रामीण युवा संगठन बहुत अच्छे पहल की शुरूआत कर सकता है। गांवों में खेल का मैदान, कुंओं की सफाई, सड़कों का निर्माण व युवा केन्द्रों की स्थापना जैसे कार्यों में अपनी विशिष्ट भूमिका का निर्वाह कर सकती है। ऐसा करने से ही सामाजिक कार्यों एवं चुनौतियों को सहेजने में युवा संगठन को बल मिलेगा।

4. ग्रामों में स्वास्थ्य अभियान की सोच को विकसित किये जाने में भी इनका सहयोग प्राप्त किया जा सकता है। नेत्र शिविर, परिवार कल्याण, गर्भवती महिलाओं को टीके एवं शिशुओं के टीकाकरण आदि जैसे महत्वपूर्ण कार्यक्रमों में अपनी सक्रिय भागीदारी का निर्वाह कर सकते हैं। स्वास्थ्य संस्थाओं अथवा संगठनों से परामर्श कर उक्त कार्यक्रमों के लिए ग्राम-ग्राम छोटे-छोटे कैम्पों का आयोजन भी किया जा सकता है। इसी प्रकार रूढ़िगत सामाजिक सर्जनाओं एवं अंधविश्वासों से भी मुक्ति पाने में इनका सहयोग लिया जाना चाहिए।

5. सरकार के समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम जैसे स्वरोजगार योजना के कार्यक्रम में इन युवा संगठनों का सहयोग लिया जा सकता है। गरीबी रेखा से नीचे के ग्रामीणों का सर्वेक्षण कार्य तथा आई.आर.डी.पी. में पात्रता सुनिश्चित कराने में इनकी असरदार भूमिका हो सकती है। इसी प्रकार लाभान्वित हितग्राहियों की सतत् मानीटरिंग में भी सहयोग लेकर इन कार्यक्रमों में होने वाले दुरूपयोग की आशंका को रोककर नियंत्रण स्थापित किया जा सकता है। 18 से 35 वर्ष आयु समूह के ऐसे युवाओं को जो गरीबी रेखा से नीचे के परिवार से हैं, उनको ग्राम स्तर पर ही रोजगार उपलब्ध कराने हेतु ट्राईसेम के अंतर्गत बेहतर प्रशिक्षण का अवसर उपलब्ध कराने हेतु भी प्रयास हो सकते हैं। ऐसे व्यक्तियों के लिए स्थानीय स्थितियों के परिप्रेक्ष्य में व्यवसाय हेतु कौन – से विशिष्ट ट्रेडों का प्रशिक्षण उनके लिए उपयोगी होगा इसका निर्धारण करने में भी युवा संगठन काफी कुछ सक्षम हो सकते हैं।

6. स्थानीय स्तर पर वन विभाग से सामंजस्य व सम्पर्क स्थापित कर पंचायतों में वन महोत्सव एवं सामाजिक वानिकी जैसे कार्यक्रमों के अंतर्गत वृक्षारोपण का कार्य करने में भी इन युवा संगठनों से मदद ली जा सकती है और ऐसे सहयोग से पर्यावरण को प्रदूषण से मुक्त रखा जा सकता है। इन कार्यों के लिए पंचायत स्तर पर युवा संगठनों के हेतु शासन द्वारा पुरस्कार योजना आरंभ की जानी चाहिए तथा युवा संगठनों द्वारा ऐसे किये गये कार्यों के लिए जहां उन्हें मानदेय या अनुदान दिया जाना चाहिए, वहीं रोपित पौधों की चौकसी व देखभाल का अतिरिक्त उत्तरदायित्व निभाने के लिए भी प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

7. पंचायत स्तर पर ग्रामीण खेलों की प्रतिस्पर्द्धा आयोजित किये जाने में युवा संगठन का नेतृत्व मददगार साबित होगा। कोई शक नहीं कि ऐसे कार्यक्रमों के हेतु युवा संगठन आगे आयेंगे। लेकिन अहम् बात यह भी होनी चाहिए कि ग्रामीणों के खेल प्रशिक्षण हेतु जनसहयोग से खेल मैदानों की सुविधा मुहय्या कराये जाने की सोच को ग्रामीण युवा संगठनों के नेपथ्य से विकसित किया जाए।

8. आकस्मिक विपत्ति जैसे बाढ़, दुर्घटना, प्राकृतिक प्रकोप सूखा आदि के समय भी इन युवा संगठनों से इनमें मानवीय सहानुभूति व संवेदनशीलता के परिप्रेक्ष्य में मदद ली जा सकती है। इससे सहिष्णुता एवं भाईचारे की भावना में विकास व प्रसार होगा।

9. ग्रामीण युवक संगठनों के माध्यम से सांस्कृतिक एवं शैक्षणिक कार्यक्रमों हेतु प्रतियोगिताओं का आयोजन भी बेहतर ढंग से कराया जा सकता है साथ ही कुटीर उद्योगों में इन्हें विशिष्ट प्रशिक्षण देकर सहकारिता के आधार पर इन उद्योगों को चलाने के लिए भी प्रोत्साहित किया जा सकता है। डूवाकरा योजना के अंतर्गत महिला एवं बाल विकास विभाग में महिलाओं के लिए इसमें पर्याप्त अवसर भी उपलब्ध हैं। उल्लेखनीय है कि महिला बाल विकास विभाग भी ऐसे उद्योग समूह को चलाने हेतु बिना कर्ज राशि भी दिलायी जाती है।

10. ग्रामीण युवा संगठनों को उक्त कृत्यों हेतु प्रोत्साहित उनके माध्यम से पंचायतों को जनहित में सुदृढ़ बनाया जा सकता हैं, साथ ही ग्राम उत्थान के साथ युवकों के मन मस्तिष्क को स्वच्छ विचारों एवं सही समझ की अंतः प्रक्रियाओं हेतु नया वातावरण तैयार किया जा सकता है, गांधीजी के ग्राम विकास के सपने को रूपाकार देने के लिए आवश्यक है कि ग्रामीण युवा संगठनों को उनकी सुप्त सृजनात्मक शक्तियों से अवगत कराते हुए उन्हें जागृत किया जाये, तथा ग्राम विकास हेतु उन पर भरोसा करके सौंपकर नवीन जिम्मेदारियां सौंपी जाकर उन्हें इस योग्य बनाया जाये कि वे पंचायती राज में ग्राम व पंचायतों का उत्तरदायित्व एवं कर्तव्य निर्वहन में सक्रिय योगदान कर सकें। युवा शक्तियों के लिए अंत में दो पंक्तियों में यही कहा जा सकता है :–

तुम चलो, तो साथ होगी, सारी दुनिया,
तुम रुके तो सिर्फ परछाई रुकेगी।
तुम उठो तो ज़लधि का लहरा उठेगा,
तुम झुके तो व्यर्थ तरूणाई ढलेगी।

(आकाशवाणी से साभार)

विकास खण्ड अधिकारी
छुरा 493-996
जिला रायपुर (म.प्र.)

पोदीने के औषधीय गुण

अनिता सोनी

पोदीना तीन प्रकार का होता है यथा जंगली, विलायती और साधारण, जिनके वनास्पतिक नाम क्रमशः मेंथा लॉंगीफोलिया, मेंथा पिपरेटा और मेंथा स्पिकाटा है। आमतौर पर भारत में साधारण और विलायती पोदीने की खेती लगभग सम्पूर्ण भारत में की जाती है। इसकी पत्तियां चटनी (सास), सूप, पेयों आदि को सुगंधित करने के लिए प्रयोग में लाई जाती हैं। इससे व्यवसायिक स्तर पर 'पिपर मेंट' बनाया जाता है, जो अनेक उद्योगों में और औषधियों के निर्माण के काम आता है। आयुर्वेद के मतानुसार पोदीना स्वादिष्ट, रुचिकर, हृदय बलवर्द्धक, कफ, खांसी, बुखार और कृमि को नष्ट करने वाला होता है। यह वातनाशक पौधा है। पेट दर्द को बंद करने में अत्यन्त उपयोगी है। पोदीने का तेल व सत्व अत्यन्त उपयोगी होते हैं, जिन्हें विभिन्न औषधियों के लिए उपयोग किया जाता है। पोदीने के विभिन्न उपयोग का उल्लेख नीचे किया गया है :

गर्मी में जुकाम, खांसी और बुखार आने पर पोदीने को चाय की भांति उबाल लें और स्वाद के अनुसार नमक डालकर पीने से लाभ होता है। इसके अलावा मस्तिष्क और हृदय को बल मिलता है साथ ही चक्कर आने बंद हो जाते हैं। इसकी पत्तियों को पीसकर उसमें नीबू निचोड़ कर पानी में घोल कर पीने से उल्टियां बंद हो जाती हैं। पोदीना और मिश्री पीस कर एक गिलास ठंडे पानी में मिलाकर पीने से बंद पेशाब खुल जाता है। यदि धूप और गर्मी के कारण नकसीर आ जाए तो नाक में पोदीने के रस की 2-3 बूंदे डालने से रक्तस्राव बंद हो जाता है। पोदीना को पीसकर पानी में घोलकर गरारे करने से 'टान्सिल' के रोगी को काफी लाभ होता है। गर्मियों में तेज धूप में चलकर आने के बाद पोदीने को पीसकर एक गिलास ठण्डे पानी में थोड़ी-सी शक्कर डालकर पीने से शान्ति और शरीर को शीतलता मिलती है। सिरदर्द होने पर पोदीने का लेप करें। पोदीना, जीरा, हींग, काली मिर्च, नमक डालकर चटनी की भांति पीस लें। इन सबको चटनी की मात्रा के समान ही लें। इन सबको एक गिलास पानी में उबालकर पीयें। इसके पीने से पेट दर्द और कब्ज जैसे रोगों से लाभ होता है। 30 ग्राम पोदीना और 10 काली मिर्च पीसकर एक गिलास पानी में घोलकर पीने से पेट के कीड़े मर जाते हैं। पोदीने की चटनी का लेप करने से दाद दूर हो जाता है।

बी जी 5, 44 ए पश्चिम विहार, नयी दिल्ली–110062

लोक योजना की प्रक्रिया

अब मैं असली मुद्दे पर आता हूं : सत्ता का हस्तांतरण और सुदृढ़ वित्तीय व्यवस्था सत्ता के हस्तांतरण के प्रावधानों से सम्बन्धित कानून बनाने के राज्यों के अधिकार का सम्मान करते हुए हमने जानबूझ कर उनके अधिकारों में हस्तक्षेप नहीं होने दिया है।

हमारा केन्द्र से जिलों पर शासन करने का कोई इरादा नहीं है। लेकिन हम ऐसी अपेक्षा करते हैं कि राज्य विधायिकाएं इस विधेयक और संशोधन के प्रावधानों और भावनाओं के अनुरूप ऐसे कदम उठाएंगी जिनसे शक्ति और अधिकारों का हस्तांतरण पंचायतों को हो सके।

पंचायतों का सबसे पहला अधिकार और शक्ति यह है कि वे राज्य सरकार द्वारा बनाए गए निर्देशों के आधार पर योजना का प्रारूप तैयार करें। ये योजनाएं उच्च स्तरों पर योजना प्रक्रिया का बुनियादी निवेश बनेंगी। इस तरह हम सुनिश्चित करेंगे कि लोगों की आवाज, उनकी जरूरतें, आकांक्षाएं एवं प्राथमिकताएं योजना की इमारत की आधार-शिला बनें। हमें ऊपर से योजना बनाना बंद कराना चाहिए। हमें जमीन की वास्तविकताओं से काफी दूर आकाशीय ऊंचाई में प्राथमिकताओं को सोचने और उन्हें निश्चित करने पर तुरन्त रोक लगा देनी चाहिए। हमें संरक्षणवादी नियोजन को समाप्त कर देना चाहिए। हमें लोक नियोजन की प्रक्रिया का शुभारम्भ करना चाहिए। हमारा विधेयक मात्र आर्थिक विकास के लिए नियोजन तक सीमित नहीं है। यह पंचायतों को सामाजिक न्याय के लिए नियोजन की ओर भारी जिम्मेदारी देता है।

हमारे गांव के जीवन पर रोमानी रंग चढ़ाने से काम नहीं बनेगा। जिन्दगी वहां कठोर है। जिन्दगी वहां कष्टमय है। जिन्दगी वहां, कई तरह से, शोषण करने वाली और दमनकारी है। सत्ता के दलालों को सत्ता के ठिकानों से निकाल बाहर करने और पंचायतों को जनता को वापस सौंपने के लिये हम जन प्रतिनिधियों पर यह गंभीर दायित्व डालते हैं कि वे सबसे पहले और सबसे ज्यादा ध्यान सबसे गरीब, सबसे वंचित और सबसे अधिक जरूरतमंद लोगों पर दें। आर्थिक विकास की हर योजना के साथ सामाजिक न्याय की योजना भी होगी। कोई भी आर्थिक विकास योजना तब तक ध्यान देने योग्य नहीं है जब तक कि इसके सामाजिक न्याय का पहलू स्पष्ट नहीं होता। यह हमारे गांवों को समृद्ध बनाने का ही नहीं अपितु उन्हें न्यायसंगत बनाने का भी घोषणा पत्र है।

पंचायतों का दूसरा दायित्व होगा राज्य सरकारों द्वारा निर्धारित शर्तों पर उन्हें सौंपी गई विकास परियोजनाओं को कार्यान्वित करना। इन परियोजनाओं को कृषि और भूमि सुधारों से लेकर सिंचाई और जलाशय प्रबन्ध तक ग्रामीण भारत की मुख्य आर्थिक चिन्ताओं को अपने अन्तर्गत लाना चाहिए। इसमें ग्रामीण अर्थ व्यवस्था को पशुपालन, डेरी उद्योग, मुर्गीपालन और मत्स्यपालन के विभिन्न क्षेत्रों में विकसित करना शामिल हो। ऐसे औद्योगिक क्रिया-कलापों को गांवों में लाना चाहिए। इन्हें छोटे जंगल उत्पादों जोकि हमारे सम्पूर्ण आदिवासियों की आय के स्रोत हैं, तक फैला होना चाहिए। इनमें ग्रामीण भारत की दिन-प्रतिदिन की आवश्यकताओं – आवास, पीने का पानी, ईंधन और चारा का समावेश होना चाहिए। सत्ता का हस्तांतरण ग्रामीण भारत के संचार और ऊर्जा के आधारभूत साज-सामान से सम्बन्धित होना चाहिए। हमने गैर-पारम्परिक ऊर्जा स्रोतों से सम्बन्धित विकास योजनाओं को पंचायत के अधिकार में लाने का सुझाव दिया है।

लोक सभा में 15 मई 1989 को पंचायती राज पर संविधान (64 वां संशोधन) विधेयक पेश करते हुए प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी का वक्तव्य –कुछ अंश।

आर.एन./708/57
डाक-त्तार पंजीकरण संख्या : डी (डी एन) 98
पूर्व भुगतान के बिना एन.डी.पी.एस.ओ., नई दिल्ली में डाक में डालने
की अनुमति (लाइसेंस) : यू (डी एन)-55

RN/708/57
P & T Regd. No. D (DN) 98
Licenced under U (DN)-55
to post without pre-payment at NDPSO, New Delhi

डा. श्याम सिंह शशि, निदेशक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाऊस, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित और
वीरेन्द्रा प्रिंटर्स, हरध्यान सिंह रोड, करोल बाग
नई दिल्ली-110005 द्वारा मुद्रित